किमत ₹ 10

जनवरी 2015

दादावाणी

अज्ञानता के कारण मनुष्य
विषय के कीचड़ में गरकता है,
लोकसंज्ञा से।

संपादक : डिम्पल महेता
वर्ष : १० अंक : ३
अखंड क्रमांक : १११
जनवरी २०१५

संपर्क सूत्र :
त्रिमंदिर, सीमंधर सिटी,
अहमदावाद-कलोल हाइ-वे,
पो.ओ.: **अडालज,**
जि.: गांधीनगर-382421.
फोन : (079) 39830100
email: dadavani@dadabhagwan.org
www.dadabhagwan.org
दादावाणी संबंधी शिकायत के लिए:
8155007500

Printed & Published by
Dimple Mehta on behalf of Mahavideh Foundation
5, Mamtapark Society,
Bh. Navgujarat College,
Usmanpura, Ahmedabad-14.
Owned by
Mahavideh Foundation
5, Mamtapark Society,
Bh. Navgujarat College,
Usmanpura, Ahmedabad-14.
Printed at
Amba Offset
Basement, Parshvanath Chambers, Nr.RBI,
Usmanpura, Ahmedabad-14.
Published at
Mahavideh Foundation
5, Mamtapark Society,
Bh. Navgujarat College,
Usmanpura, Ahmedabad-14.
Total 32 pages including cover

सबस्क्रिप्शन (सदस्यता शुल्क)

१५ साल

भारत	:	७५० रुपये
यू.एस.ए.	:	१५० डॉलर
यू.के.	:	१०० पाउन्ड

वार्षिक

भारत	:	१०० रुपये
यू.एस.ए.	:	१५ डॉलर
यू.के.	:	१० पाउन्ड

भारत में D.D. / M.O. 'महाविदेह फाउन्डेशन' के नाम से संपर्कसूत्र के पते पर भेजें।

दादावाणी

विषय के भँवर में फँसे लोकसंज्ञा से

संपादकीय

ये विषय-विकार ही पूरे संसार की मुख्य जड़ है ऐसा समझना और समझकर अनुभव करना, वह इतना आसान नहीं है क्योंकि इस काल में तो उस सुख को ही पूरी दुनिया के लोगों ने सर्वोच्च सुख माना है, लेकिन वास्तव में वह भ्रांति ही है।

लोकसंज्ञा अर्थात् लोगों ने जिस में सुख माना, उसी में हमें भी सुख मानना हैं, वह लोकसंज्ञा है। लोगों ने लक्ष्मी, गाड़ी, बंगले में सुख माना, तो खुद भी उसमें सुख मानते हैं। लोगों ने मान में सुख माना तो खुद भी मान की रेस में पड़ते (उतरते) हैं, लोगों ने विषय में सुख माना तो खुद भी विषय के सुख में फँस जाता हैं। उसने ऐसा किया इसलिए मैं भी करूँगा। मैं ऐसा करता हूँ, इसलिए दूसरा भी कोई ऐसा ही करता है।

जगत् की वास्तविकता यह है कि इस संसार में हर-एक व्यक्ति कड़वे-मीठे अनुभव में से गुज़र रहा है लेकिन अंतर में उसे संसार का वास्तविक स्वरूप समझ में आता है, जो उसे खुद को अखरता है लेकिन जैसा है वैसा कह नही पाता। घर में कलह करके, रोकर और फिर चेहरा धोकर स्वस्थ हो जाता है, जैसे कुछ हुआ ही ना हो। घर में पत्नी से तंग आए हुए, बाहर रौब मारते हैं! ऐसा तो इस दंभी (पाखंडी) जगत् का देखादेखी का व्यवहार है।

किसी ने सही सिखाया ही नहीं है। शादी करके माँ-बाप खुद दु:ख का अनुभव करके बैठे हैं लेकिन बेटे को सही सलाह नहीं देते, सब अपने-अपने मतलब का सोचते हैं। शादी क्यों करवा रहे हो, तो कहेंगे मेरा नाम होगा। अरे! लेकिन सोचो तो सही कि नाम करना है या मोक्ष का काम निकालना है?

अज्ञानता के कारण मनुष्य लोकसंज्ञा से विषय के भँवर में फँसता है, यह लोकसंज्ञा क्या है, विषय की लोकसंज्ञा कैसे ग्रहण हो जाती है, उससे चितवृति कैसे बिखर जाती है, लोकसंज्ञा से कैसे विषय के अभिप्राय गाढ़ होते हैं, यह विषय की लोकसंज्ञा उत्पन्न कैसे होती है। लोकसंज्ञा बहुत ही सीधा-सादा शब्द है लेकिन काम कहाँ तक का कर जाता है? बहुत ही गुप्त रूप (तरीके) से मार्ग को पलटवा देता है (मार्ग से भटका देता हैं)। अपने जीवन के हर एक तरफ लोक-मान्यता झलकती है और अपना ध्रुव काँटा लोकसंज्ञा के मुताबिक दिशा पकड़ता है, वह बहुत ही जोखिमवाला है।

जगत् की दृष्टि से सर्वोत्तम सुख विषय-भोग में माना गया है और आपको उसका पृथक्करण लोक-दृष्टि द्वारा मिला है। कभी ज्ञानी-पुरूष की दृष्टि से विषय का पृथक्करण सुना नहीं है, जाना नहीं है। यदि ज्ञानीपुरूष की दृष्टि से विषय के स्वरूप को समझ लें तो विषय के मूर्छित सुखों में से छुटकर आत्मा के शाश्वत सुख की ओर प्रयाण होगा।

एक तरफ लोकसंज्ञा की वजह से विषय के सुख की मान्यता मजबूत हो गई है तो दूसरी तरफ उसका छेदन करनेवाला अक्रम विज्ञान है जो विषय के स्वरूप और परिणाम को जैसा है वैसा दर्शाता है। इस प्रकार विषय विकार के उस सुख की मान्यता, अभिप्राय, लोकसंज्ञा और उनमें से बाहर निकलने के लिए सही समझ देता है। जो हमारे विषय की मुख्य जड़ को हमेशा के लिए जड़ से उखाड़ दे प्रस्तुत संकलन में ब्रह्मचर्य पर ऐसी वाणी अंकित हुई है। जिसके आराधन से महात्माओं के जीवन का ध्रुव काँटा, लोकसंज्ञा नहीं अपितु ज्ञानी की संज्ञा में रहे ऐसी अभ्यर्थना।

जय सच्चिदानंद

पाठकों से...

'दादावाणी' सामायिक में मुद्रित पाठ्य सामग्री मूलत: गुजराती 'दादावाणी' का हिन्दी रूपांतर है। कोष्ठक में दिए गए शब्द या तो अंग्रेज़ी शब्द का अर्थ हैं अथवा शब्द का तात्पर्य स्पष्ट करने हेतु वृद्धित किए गए वाक्यांश है। यहाँ पर 'आत्मा' शब्द को गुजराती और संस्कृत की तरह पुल्लिंग में प्रयोग किया गया है। जहाँ पर भी चंदूभाई नाम का प्रयोग हुआ है, वहाँ पर पाठक खुद को समझें। 'दादावाणी' के इस अंक में अगर आप कोई बात न समझ पाएँ तो प्रत्यक्ष सत्संग में पधारकर समाधान प्राप्त करें। अनुवाद में कोई कमी नज़र आए तो हमें सूचित करने की कृपा करें। ताकि भविष्य में सुधार किया जा सकें ऐसी क्षतियों के लिए हम आपके क्षमाप्रार्थी है।

विषय के भँवर में फँसे लोकसंज्ञा से

संसार के भँवर में धँस गए विपरीत बुद्धि से

प्रश्नकर्ता : (हिंदू धर्म में ब्रह्मचर्य का महत्व समझाया गया है फिर भी) इस मनुष्य जाति में ब्रह्मचर्य रह ही नहीं सकता, इसका क्या कारण है? मोह है? राग है?

दादाश्री : लोगों ने जो माना, वही हमने मान लिया। बुद्धिपूर्वक का सुख नहीं है यह; बिना सोचे-समझे माना गया सुख है। वह सिर्फ मान्यता का ही सुख है और जलेबी सुखदायी है, वह बुद्धिपूर्वक का सुख है।

विषय का खेल तो बुद्धिपूर्वक नहीं है, यह तो सिर्फ मन की ऐंठन ही है। कोई भी बुद्धिमान इंसान यदि बुद्धि से विषय के बारे में समझने जाए, तो बुद्धि विषय को लेट गो नहीं करेगी। ये बुद्धिमान लोग लेट गो करते हैं, इसका क्या कारण है? लोकसंज्ञा के अनुसार चलते हैं, इसलिए उस तरफ का आवरण नहीं टूटा।

एक जन ने कहा कि बुद्धिपूर्वक में क्या हर्ज है? तब मैंने कहा, बुद्धिपूर्वक की चीज़ें उजाले में करनी होती है। सीक्रेसी (गुप्त) नहीं होती। हज़ार लोगों की मौजूदगी में बैठकर जलेबी खा सकते हैं? जलेबी में हर्ज नहीं है न? उसे शर्म नहीं आती?

प्रश्नकर्ता : नहीं, शर्म नहीं आती, रौब से खाई जा सकती है!

दादाश्री : विषय तो ऐसी चीज़ है जिसे मूर्ख भी न चाहे। बुद्धि का संपूर्ण प्रकाश हो चुका हो, बुद्धि का विकास हो चुका हो, वह भी विषय से डरता है बेचारा। क्योंकि विषय, वह तो बिल्कुल मूर्खतापूर्ण चीज़ है। इस काल में यह तो जलन की वजह से विषय के कीचड़ में गिरता है, नहीं तो कोई कीचड़ में गिरेगा ही नहीं न! बहुत जलन होने लगे तब इंसान क्या करे? इसलिए उल्टा उपाय करता है। विषय के बारे में यदि सोचा जाए तो विचारक इंसान को वह अच्छा ही नहीं लगेगा। यानी कि बुद्धि से भी विषय छूट सकता है। उसमें फिर ज्ञान का और इसका क्या लेना-देना? विषय के बारे में यदि सोचा होता न, तो उसे विषय बिल्कुल अच्छा ही नहीं लगता। निर्मल बुद्धिवाले को विषय का पृथक्करण करने को कहें तो, 'विषय थूकने जैसी चीज़ भी नहीं है' ऐसे कहेगा। अत: जिसकी बुद्धि निर्मल हो, उसे तो विषय अच्छा ही नहीं लगेगा। वह छूएगा ही नहीं न! लेकिन जिसकी बुद्धि में मल जम गया हो, उसे तो सबकुछ उल्टा ही दिखेगा।

इस संसार के झंझट में विचारशील को पुसाता नहीं है। जो विचारशील नहीं है, उसे तो यह झंझट है उसका भी पता नहीं चलता। वह मोटा बहीखाता कहलाता है। जैसे कि कोई कान से बहरा आदमी हो, उसके सामने उसकी चाहे जितनी गुप्त बातें करें, उसमें क्या परेशानी है? ऐसा अंदर भी बहरा होता है सब, इसलिए उसे यह जंजाल पुसाता है। बाकी जगत् में मज़े ढूँढने जाता है, तो इसमें तो भाई कोई मज़ा होता होगा?

विषय बंधन के कारण खड़ा है जगत्

प्रश्नकर्ता : लेकिन इस संसार के लोगों ने तो, खुद उसमें सुख माना है इसीलिए सब को पकड़-पकड़कर कहते हैं कि इसी में मज़ा है, चलो!

सुख मिले, उसके लिए लोग शादी करते हैं। मुझे कोई हेल्पर मिले, संसार अच्छा चले, ऐसा कोई पार्टनर मिले इसलिए शादी करते हैं न? अरे! यह तो फँसने की जगह हैं।

विषय का पृथक्करण करे तो दाद को खुजलाने जैसा है। हमें तो बहुत विचार आते हैं और लगता है कि अरेरे! अनंत जन्मों से यही किया! जितना कुछ हमें पसंद नहीं है, वह सबकुछ विषय में है। निरी दुर्गंध है। आँखों को देखना अच्छा नहीं लगता, नाक को सूंघना अच्छा नहीं लगता। तूने सूंघकर देखा था? सूंघकर देखना था न? तो वैराग तो आ जाता। कान को नहीं रुचता, सिर्फ चमड़ी को रुचता है। लोग तो पैकिंग को देखते हैं, माल को नहीं देखते। जो चीज़ पसंद नहीं है, पैकिंग में तो वही चीज़ें भरी हुई है। निरी दुर्गंध का बोरा है! लेकिन मोह के कारण भान नहीं रहता और इसीलिए तो पूरा जगत् चकरा गया है।

यह (मुंबई में) बांद्रा स्टेशन की जो खाड़ी आती है, उसकी दुर्गंध पसंद है? उससे भी बुरी दुर्गंध इस पैकिंग में हैं। आँखों को पसंद नहीं आएँ, ऐसे चित्र-विचित्र पार्ट्स अंदर है। इस बोरे (शरीर) में तो बेहद विचित्र गंदगी है। यह अपने अंदर जो हृदय है, उसी लौंदे को निकालकर हाथ में दे दे तो? और कहे कि अपने साथ हाथ में रखकर सो जा, तो? नींद ही नहीं आएगी न? यह तो समुद्र के विचित्र जीव जैसा दिखता है। जो पसंद नहीं है, वह सभी कुछ इस देह में है। ये आखें यों बहुत सुंदर दिखती हों, लेकिन मोतियाबिंद हो जाए और उन सफेद आँखों को देखा हो तो? अच्छा नहीं लगेगा। ओहोहो सब से ज़्यादा दुःख इसी में हैं। यह शराब जो नशा चढ़ाती है, उस शराब की दुर्गंध इंसान को अच्छी नहीं लगती और यह विषय तो सर्व दुर्गंध का कारण है। सभी नापसंद चीज़ें वहाँ पर है। अब क्या होगा यह आश्चर्य? इसमें से छूट गए तो फिर राजा। जिसे भूख ही नहीं लगी हो उसे क्या? जो भूखा होगा वही होटल में जाएगा न? जहाँ-तहाँ झाँकता रहेगा, लेकिन जो खाना खाकर आराम से टहल रहा है, रस-रोटी खाकर टहल रहा है, वह क्यों होटल में जाएगा? गंदगीवाली होटलें! विषय के बारे में गहराई से सोचने पर यही लगता है कि यह गटर तो खोलने जैसा है ही नहीं। कितना बंधन! यह जगत् इसीलिए खड़ा है न!

जिसका विचार भी पसंद न हो, उससे संबंध कैसे पुसाए?

अरे इस विषय में तो कुछ है ही नहीं। यह तो फूल्स पैरडाइस (मुर्ख लोगों की दुनिया) है। विषय में कोई इन्द्रिय खुश नहीं होती। आँखें भी अंधेरा ढूँढती हैं। आम देखने के लिए आखें अंधेरा ढूँढती हैं? नाक कहती है कि (नाक) बंद कर दो? लोग बदबू मारते होंगे क्या? दो दिन नहीं नहाएँ तो क्या होता है? आम की तरह महकते हैं? यानी ये विषय तो नाक को ज़रा भी अच्छे नहीं लगते, आँखों को भी अच्छे नहीं लगते। जीभ की तो बात ही क्या करनी? उल्टी आने जैसा होता है। आम को सड़ जाने के बाद सूंघें तो अच्छा लगता है? सड़े हुए आम को छूना, स्पर्श करना अच्छा लगता है? तो फिर वहाँ भोगने का रहता ही कहाँ है? कोई इन्द्रिय एक्सेप्ट नहीं करती फिर भी लोग विषय भोगते हैं, वह आश्चर्य है न!

विषय में भला कौन सा सुख है? श्रीमद् राजचंद्रजी ने तो कहा है कि, 'यह तो वमन करने योग्य भूमिका भी नहीं है। थूकने को कहे तो भी अच्छा नहीं लगे।' अन्य जगह पर थूक सकते हैं, लेकिन यहाँ तो हमें थूकने में भी शर्म आए। लोग

कैसा मान बैठे हैं! सबकुछ उल्टा (गलत) ही मान बैठे हैं न!

यानी विषय के बारे में यदि कोई सोचे न, यदि सोचना आए, तो वह विषय की ओर कभी जाएगा ही नहीं। लेकिन सोचना भी नहीं आता न! विषय, वह अजागृति है। विषय पुसाए ही कैसे? जो चीज़ें सोचने पर अच्छी नहीं लगें, उसी चीज़ का संबंध कैसे पुसाए?

लोगों ने विषय में सुख माना है, उसी प्रकार खुद ने भी इसमें सुख मान लिया है। इसमें बिल्कुल भी सुख मानने जैसा नहीं है। बाकी, विषय तो लोकसंज्ञा है, सिर्फ बिना सोचे-समझे की हुई बात है।

लोकसंज्ञा से मान लिया विषय में सुख

प्रश्नकर्ता : 'यह विषय तो लोकसंज्ञा है', इसका क्या मतलब है?

दादाश्री : लोकसंज्ञा से चलें तो निरा दुःख ही है और 'ज्ञानी' की संज्ञा से चलें तो निरा सुख, सुख और सुख ही है। लोकसंज्ञा यानी लोगों ने जिस में सुख माना, भौतिक वस्तुओं में सुख माना, उन्हीं में हम ने भी सुख माना। जबकि ऐसा मानना कि आत्मा में ही सुख है, वह 'ज्ञानी' की संज्ञा!

आप लोकसंज्ञा से चलते हो या ज्ञानी की संज्ञा से चलते हो? लोगों की संज्ञा कैसी होती है? कि पैसों में सुख है, विषय में सुख है, चोरी करने में सुख है, ऐसी संज्ञा होती है। ज्ञानी की संज्ञा आत्मा में सुख देखती है, शाश्वत वस्तु में सुख है ऐसा देखती है। आपने जो चखे हैं वे तो आरोपित सुख हैं। ऐसा भी कहते हैं कि ये मेरी मौसी सास आई, ये मेरी बुआ सास आई, मेरी मामी सास आई! अपनी मामी सास या मौसी सास होती होंगी क्या कहीं? यह तो ऐसा समझता जाता है कि ये सब मेरे हैं, लेकिन इस दुनिया में अपना कोई है ही नहीं? आत्मा अलग ही है, जुदा ही है पूरा। सच्चा सुख तो आपने एक क्षणभर के लिए भी नहीं चखा हैं यदि चख लिया हो तो सारा पागलपन चला जाता है और जब तक चखे नहीं तब तक सर्वस्व पागलपन बरतता रहता है।

विषय की पाशवता लोकसंज्ञा की वजह से

विषय के संबंध में किसी ने सोचा ही नहीं है कि उसमें क्या-क्या दोष हैं! जितना दोष दुनिया में किसी और चीज़ में नहीं होगा, उतना दोष अब्रह्मचर्य में है। लेकिन जानते ही नहीं हों तो क्या हो सकता है? यही लोकसंज्ञा चली आई है, पाशवता की ही। जैसा पशु में भी नहीं होता, मनुष्यों की वह लीला देखकर अचरज ही होगा न!

अरे! विषय में सुख होता होगा कहीं? इन कुत्तों को भी यदि खाना-पीना दिया हो न, तो वे भी बाहर नहीं जाते। ये बेचारे तो भूख के कारण बाहर घूमते रहते हैं। ये मनुष्य सारा दिन खाकर घूमते रहते हैं। मनुष्यों का भूख का दुःख मिटा है तो उन्हें विषयों की भूख लगी है। मनुष्य में से पशु बनने को हो, तभी तक विषय है, लेकिन जो मनुष्य में से परमात्मा बननेवाला है उसमें विषय नहीं होता। विषय तो जानवरों की 'कोड लैंग्वेज' (सांकेतिक भाषा) है, पाशवता है, 'फुल्ली' (पूर्ण) पाशवता है। अत: वह तो होनी ही नहीं चाहिए।

यह सब सोचना। आपको साधु बनाने नहीं आया हूँ। ये कितनी सारी गलत मान्यताएँ घुस गई हैं, उन्हें निकालने की ज़रूरत है। विषय संबंध के बारे में विस्तार से समझ लिया जाए तो विषय रहेगा ही नहीं।

एक फँसा, सभी को फँसाया

यह तो आपको समझाने के लिए कह रहे हैं ताकि आपको संतोष रहे कि हमने जो (ब्रह्मचर्य) मार्ग अपनाया है, वह सही है। बाकी, विषय में सुख है ही नहीं, ऐसा तो कोई कहेगा ही नहीं न? सभी लोग विषय में सुख है ऐसा ही सीखाते हैं।

ऐसा है, कि एक व्यक्ति को उँगली में कुछ दर्द हुआ होगा, तब किसी ने कहा कि ततैये की बीट लगाने से ठीक हो जाएगा। इसलिए ततैये की बीट लेने के लिए एक आदमी ने पेड़ के खोखट में हाथ डाला, लेकिन वहाँ अंदर एक बिच्छू बैठा होगा, उसने हाथ डालते ही उसे डंक मार दिया इसलिए बीट नहीं ले पाया और ऊपर से क्या कहा कि 'मुझसे टूटा नहीं।' तो दूसरे ने कहा, 'तुझसे नहीं टूटा? ला, मैं तोड़ देता हूँ।' फिर दूसरे ने हाथ डाला तो उसे भी बिच्छू ने डंक मारा। तो वह समझ गया कि पहलेवाले ने डंक के बारे में नहीं बताया, इसलिए मुझे भी नहीं बताना है और उसने भी साफ-साफ नहीं बताया। फिर तीसरा गया, उसे भी डंक मारा। इसी तरह बिच्छू सभी को डंक मार ही रहा है, लेकिन कोई कहता नहीं है।

विषय आराधन किसलिए ?

यह तो केवल रोंग मान्यता के कारण ही यह सब घर कर गया है। बाकी, एक-दो बच्चों की आशा रखने जितना ही हो तो पर्याप्त है यह। वर्ना मनुष्य में विषय नहीं होता, वह भी उच्च जातियों में! उच्च जातियों में तो संयम होना चाहिए।

विषय का विचार ही नहीं आना चाहिए। जब तक पाशवता है, तब तक विषय के विचार आए बगैर नहीं रहते। मनुष्य में पशुता है, तब तक विचार आते हैं। पशुता गई कि विचार चला जाएगा। ब्रह्मचर्यवालों को तो जहाँ देखो, वहाँ उन्हें ब्रह्मचर्य ही रहता है, विषय से संबंधित विचार ही नहीं आता। ब्रह्मचर्य में आया यानी देवस्थिति में आया, मनुष्यों में देवता!

लोकसंज्ञा से होते हैं अभिप्राय अवगाढ़

प्रश्नकर्ता : दादाजी, यह लोकसंज्ञा घर कैसे कर जाती है?

दादाश्री : पूरा जगत् अभिप्राय के कारण चल रहा है। अभिप्राय वस्तु तो ऐसी है न कि अपने यहाँ आम आया, और सभी चीज़ें आई, अब इन्द्रियों को हमारी प्रकृति के अनुसार बहुत पसंद आता है और इन्द्रियाँ सब खाती हैं, ज़्यादा खा जाती हैं, परंतु इन्द्रियों को ऐसा नहीं है कि अभिप्राय बनाएँ। यह तो बुद्धि अंदर नक्की करती है कि यह आम बहुत अच्छा है! इसलिए उसका आम के प्रति अभिप्राय बन जाता है। फिर दूसरों को ऐसा कहता भी है, 'भाई, आम जैसी कोई चीज़ नहीं दुनिया में।' फिर उसे याद भी आता रहता है, खटकता रहता है कि आम नहीं मिल रहा। इन्द्रियों को और कोई आपत्ति नहीं है, वे तो किसी दिन आम आए तो खा लेती हैं, नहीं आए तो कुछ नहीं। ये अभिप्राय ही हैं। वे ही सब परेशान करते हैं! अब इसमें सिर्फ बुद्धि काम नहीं करती। लोकसंज्ञा इसमें बहुत काम करती है। लोगों ने जो माना हुआ है, उसे पहले खुद बिलीफ़ में रखता है, यह अच्छा और यह खराब। फिर खुद के प्रियजन कहें तो उसकी बिलीफ़ अधिक मज़बूत होती जाती है।

उसी तरह ये अभिप्राय कोई देता नहीं है, लेकिन लोकसंज्ञा से अभिप्राय बन जाते हैं कि अपने बगैर कैसे होगा? ऐसा हम नहीं करेंगे तो कैसे चलेगा? ऐसी संज्ञा बैठ (फिट हो) गई है, इसलिए फिर हमने आपको 'व्यवस्थित' कर्ता है, ऐसा ज्ञान दिया, इससे आपका अभिप्राय बदल गया कि वास्तव में हम लोग कर्ता नहीं हैं, 'व्यवस्थित' कर्ता है।

अनंत जन्मों से लोकसंज्ञा से चले हैं, उसी का यह सब भरा हुआ माल है! यानी जो अभिप्राय भरे हैं, उनका झंझट है। जो अभिप्राय नहीं रखे, उनका कोई झंझट नहीं होता!

लोकसंज्ञा से अभिप्राय डल गए हैं, वे ज्ञानी की संज्ञा से तोड़ डालने हैं!

लोकसंज्ञा से बिखर गईं चित्तवृतियाँ

प्रश्नकर्ता : ये चित्तवृति जो बिखर जाती है

उसका मूल बेसमेन्ट (आधार) क्या है? किस वजह से बिखर जाती है?

दादाश्री : पूरा ही निश्चय नक्की किए बगैर और खुद लोगों के कहे अनुसार चलता है इसलिए! लोगों ने जिस में सुख माना उसमें खुद भी मानता है कि बंगले के बगैर तो सुख मिलेगा ही नहीं। अरे भाई! खाना अच्छा नहीं हो तो सुख नहीं मिलता, बंगले का क्या करना है? रोज़ लड्डू खाने मिलते हों तो बंगले की ज़रूरत है क्या?

प्रश्नकर्ता : तो लोकसंज्ञा चित्तवृति बिखेरने में हेल्प (मदद) करती है?

दादाश्री : हाँ, लोकसंज्ञा से ही ये सारी चित्तवृति बिखर गई है। पूरे दिन किसी और की ज़रूरत ही क्यों पड़ती है आपको? दो लड्डू और थोड़ी सी सब्ज़ी मिल जाए तो किसी और की ज़रूरत पड़ेगी? आवाज़ देनी पड़ती है आपको कि फलाँ चाचा यहाँ आइए, फलाँ चाची यहाँ आइए?

लोगों का देखकर ऐसा सब सीख गया है। ये सारी लोकसंज्ञा है। देखकर सीखते हैं। कोई कहेगा, देखो, हमारा साला आया', तो फिर जो छोटा (भाई) होगा वह कहेगा, 'मैं भी शादी करूँगा, तब मेरा भी साला आएगा', ये सब लोकसंज्ञा।

अंधा अहंकार ग्रहण करे लोकसंज्ञा

प्रश्नकर्ता : लोकसंज्ञा ग्रहण कौन करता है?

दादाश्री : अहंकार ही सब करता है। अहंकार अंधा है, देख ही नहीं सकता बेचारा, बुद्धि की आँखों से चलता है वह। अब यदि बुद्धि कहे, 'वे तो हमारे मामा-ससुर लगते हैं।' तब कहेगा 'अच्छा'।

प्रश्नकर्ता : यानी ये सब बुद्धि के ही बखेड़े होंगे न?

दादाश्री : बुद्धि की वजह से ही यह संसार खड़ा हो गया है। बुद्धि सिर्फ सलाहकार ही है। यह अहंकार ही अंधा है, सबकुछ उसी के कारण है और फिर कहता है, 'यह मैं ही हूँ'। बुद्धि नहीं कहती कि, 'यह मैं हूँ।' 'चंदूभाई भी मैं, इनका ससुर भी मैं हूँ, इनका मामा भी मैं हूँ', सबकुछ वही (अहंकार)। बुद्धि के हिस्से में कुछ भी नहीं है, खाली। समझाती भी वही है। रोंग-बिलीफ अहंकार के कारण है, अहंकार उसी की आँखों से चलता है।

लोभ की वजह से फँसता है लोकसंज्ञा में

प्रश्नकर्ता : कुछ लोगों को तो लोकसंज्ञा की वजह से सबकुछ चाहिए। किसी की गाड़ी देखी तो उसे खुद को भी चाहिए। लोकसंज्ञा उत्पन्न कैसे होती है?

दादाश्री : लोकसंज्ञा उत्पन्न कब होती है? जब खुद अंदर असंतुष्ट हो, तब। मुझे अभी तक कोई सुख देनेवाला नहीं मिला! मुझे बचपन से ही रेडियो तक लाने की ज़रूरत नहीं पड़ी। ये सारे जीते-जागते रेडियो ही घूम रहे हैं न! अंदर जब लोभ भरा पड़ा हो तब लोकसंज्ञा आ मिलती है।

नहीं सिखाई सही चीज़ किसी ने

इस जगत् का व्यवहार ही ऐसा है। किसी ने सही बात सिखाई ही नहीं है न! माँ-बाप भी कहते हैं कि शादी कर लो अब। और माँ-बाप का फ़र्ज़ भी तो है न? लेकिन कोई सही सलाह नहीं देता कि इसमें ऐसा दुःख है। वे तो कहेंगे, 'शादी करवा दो शादी में तो कितने ही ऐक्सिडेन्ट होते हैं, फिर भी कितनी ही शादियाँ होती हैं न? यह तो, शादी के कुएँ में गिरना पड़ता है। कुछ न हो तो अंत में माँ-बाप भी उठाकर उस कुएँ में डाल देते हैं। वे लोग नहीं डालेंगे तो मामा उठाकर डाल देगा। ऐसा है यह फँसाववाला जगत्!

प्रश्नकर्ता : लेकिन दादाजी माँ-बाप क्यों फँसाते हैं?

दादाश्री : रास्ता दिखानेवाला कोई है ही नहीं। हर कोई विषय का मार्ग ही दिखाता है। माँ-बाप भी कहेंगे कि, 'शादी कर ले, भई। हम खुद तो फँसे हुए है, तुझे भी फँसाए बगैर हम रहेंगे ही नहीं न! ताकि उसके वहाँ बच्चा हो तो मैं दादा बन जाऊँ।' बस, उन्हें इतनी ही उत्कंठा होती है। 'अरे, लेकिन दादा बनने के लिए मुझे क्यों इस कुएँ में धकेल रहे हो?' बाप को दादा बनना हो, उसके लिए हमें कुँए में डालते हैं।

प्रश्नकर्ता : उसमें यदि कोई ब्रह्मचर्य की ओर जाए, उसके तो सभी विरोधी हो जाते हैं।

दादाश्री : हाँ, लोगों को नाम चलाना है, 'मेरे बेटे के बेटे ने नाम कमाया है' कहेंगे! फिर वह फँसे तो भले ही फँसे, लेकिन 'मेरा नाम तो हो जाए,' कहेंगे!

लोगों के सुख में खुद ने भी माना सुख

इन लोगों ने तो विषय के विज्ञापन छापे और सभी लोगों को उस तरफ मोड़ा। फिर भी देखो जलन, देखो जलन! तू मुंबई में जा तो सही! नंगे नाच-गाने देखते हैं, फिर भी जलन! आजकल तो सभी ओर यही तूफ़ान चल रहा है न! उसकी वजह से जलन भी बेहद पैदा हुई है! रात-दिन जलन, जलन और जलन!

यह सब तो नासमझी से है। प्याज की गंध किसे आती है? जो प्याज खाता है, उसे गंध नहीं आती। जो प्याज नहीं खाता, उसे तुरंत ही गंध आती है। विषयों में पड़ा है इसलिए विषयों में रही गंदगी को नहीं समझ पाता। इसलिए विषय नहीं छूट पाता और राग करता रहता है। वह भी अभानता का राग है। सिर्फ आत्मा ही मांसरूपी नहीं है। बाकी सब निरा मांस ही है न!

आहार तो हर रोज़ अच्छा खाता है, लेकिन चार दिन का भूखा हो तो बासी गंदी रोटी भी खा जाता है। यह आहार तो अच्छा होता है, लेकिन यह विषय तो उससे भी ज़्यादा गंदगीवाला है। भूख की जलन की वजह से गंदी रोटी खाता है, उसी तरह जलन की वजह से वह विषय भोगता है। लेकिन गंदी रोटी खाते समय कहता है, 'चलेगा', लेकिन क्या फिर से वैसा खाने की इच्छा होती है? नहीं। दोबारा वैसा खाने की इच्छा तो किसी को भी नहीं होती लेकिन विषय में ऐसा नहीं रहता न? विषय में भी ऐसा ही रहना चाहिए।

इस तरह फँसाव बढ़ता गया

यह रोटी और सब्ज़ी के लिए शादी की। पति समझे कि मैं कमाकर लाऊँगा, लेकिन यह खाना कौन बनाकर देगा? पत्नी समझती है कि मैं रोटी बनाती तो हूँ, लेकिन कमाकर कौन देगा? ऐसा करके दोनों ने शादी की और सहकारी मंडली बनाई। फिर बच्चे भी होंगे ही। एक लौकी का बीज बोया, फिर लौकी लगती रहती है या नहीं लगती रहती? बेल के पत्ते-पत्ते पर लौकी लगती है। वैसे ही ये मनुष्य भी लौकी की तरह उगते रहते हैं। लौकी की बेल ऐसा नहीं बोलती कि ये मेरी लौकियाँ हैं। ये मनुष्य अकेले ही बोलते हैं कि ये मेरी लौकियाँ हैं। यह बुद्धि का दुरुपयोग किया। बुद्धि पर निर्भर रही, इसलिए मनुष्य जाति निराश्रित कहलाई। दूसरे कोई जीव बुद्धि पर निर्भर नहीं हैं। इसलिए वे सब आश्रित कहलाते हैं। आश्रित को दुःख नहीं होता। इन्हें ही सारा दुःख होता है।

लेकिन पत्नी सामना करे तब उस सुख का पता चलता है कि यह संसार भोगने जैसा नहीं है। लेकिन यह तो तुरंत ही मूर्छित हो जाता है। मोह का इतना सारा मार खाता है, उसका भान भी नहीं रहता। ये विकल्पी सुखों के लिए भटका करते हैं।

बीवी रूठी हुई हो तब तक 'या अल्लाह परवरदिगार' करता है और बीवी बोलने आई तब फिर मियाँभाई तैयार! फिर अल्लाह और बाकी सब

एक तरफ रह जाता है! कितनी उलझन! ऐसे कोई दु:ख मिट जानेवाले हैं? घड़ीभर तू अल्लाह के पास जाए तो क्या दु:ख मिट जाएगा? जितना समय वहाँ रहेगा उतना समय अंदर सुलगता बंद हो जाएगा ज़रा, लेकिन फिर वापस कायम की सिगड़ी सुलगती ही रहेगी। निरंतर प्रकट अग्नि कहलाती है, घड़ीभर भी सुख नहीं होता! जब तक शुद्धात्मा स्वरूप प्राप्त नहीं होता, खुद की दृष्टि में 'मैं शुद्ध स्वरूप हूँ' ऐसा भान नहीं होता तब तक सिगड़ी सुलगती ही रहेगी। शादी में भी बेटी का ब्याह करवा रहे हों तब भी अंदर सुलग रहा होता है! निरंतर संताप रहा करता है ये संसार रोग ऐसी चीज़ नहीं है कि चला जाए। यदि इस तरफ का रोग कम हो जाए तो उस तरफ का रोग शुरू हो जाता है।

संसार यानी क्या? जंजाल बीवी-बच्चों का जंजाल और वह अनंत जन्म बिगाड़ देता है। यह देह लिपटा हुआ है, वह भी जंजाल है! जंजाल को तो भला शौक होता होगा? उसका शौक होता है, वह भी आश्चर्य है न! मछली पकड़ने का जाल अलग और यह जाल अलग! मछली के जाल में से काट-कूटकर निकला भी जा सकता है, लेकिन इसमें से निकला ही नहीं जा सकता। तब उल्टा अधिक फँसाव लगता है। ठेठ अर्थी निकलती है तब निकला जाता है।

शादी के बंधन का फँसावा कैसा?

बड़ौदा में एक सेठ थे। उनकी पत्नी बहुत किच-किच किया करती थी। घर में पाँच-छ: बच्चे, खातापीता घर था, लेकिन पत्नी बहुत तेज़ थी। इसलिए सेठ तंग आ गए थे। उन्होंने सोचा, ''इससे तो साधु बन जाना अच्छा है, लोग 'बापजी, बापजी' तो करेंगे कम से कम।'' अत: सेठ तो चुपचाप भाग खड़े हुए और साधु बन गए। लेकिन पत्नी बड़ी होशियार निकली, सेठ को खोज निकाला उसने तो और अचानक ठेठ दिल्ली के उपाश्रय में जा पहुँची। वहाँ महाराज का व्याख्यान चल रहा था। सेठ भी सिर मुँडवाकर साधु वेष में बैठे थे। सेठानी ने तो वहीं पर सेठ को डाँटना शरू कर दिया, 'अरे, आपने मेरे साथ यह कैसा व्यापार शुरू किया है? घर पर छ: बच्चे मेरे सिर पर डालकर कायरों की तरह क्यों भाग खड़े हुए? उनकी पढ़ाई और शादी कौन करवाएगा? उसने तो सेठ का हाथ पकड़ा और लगी घसीटने। सेठ समझ गए कि ज़्यादा खींचा-तानी करूँगा तो नाहक बदनामी होगी। उन्होंने कहा, 'ज़रा ठहर! कपड़े तो बदल लेने दे!' इस पर सेठानी बोली, 'नहीं, अब आपको ऐसे खिसकने नहीं दूँगी, इन्हीं कपड़ों में घर चलिए। घर से भागते हुए शरम नहीं आई थी?' उपाश्रय के महाराज भी समझ गऐ और इशारे से जाने को समझाया। सेठानी तो उसी वेष में सेठ को घर ले आई वापस।

शादी तो सचमुच में बंधन है। भैंस को डिब्बे में भरने जैसी दशा हो जाती है। इसके बजाय लोहे की सांकल होती तो काटकर छूट जाते, लेकिन यह सांकल तो टूटती नहीं है न! लाख जन्मों तक भी वह छूटता नहीं है।

अनिवार्यतावाला जगत् न सहा जाए, न छूटा जा सके

यह अनिवार्य जगत् है। घर में पत्नी का क्लेशवाला स्वभाव पसंद नहीं हो, बड़े भाई का स्वभाव पसंद नहीं हो, इस तरफ पिताजी का स्वभाव पसंद नहीं हो, इस तरह के संग में मनुष्य फँस जाए तब भी रहना पड़ता है। कहाँ जाए पर? इस फँसाव से चिढ़ मचती है, लेकिन जाए कहाँ? चारों तरफ बाड़ है। समाज की बाड़ होती है। 'समाज मुझे क्या कहेगा?' सरकार की भी बाड़ें होती हैं।

घर जाएँ तो पत्नी की झिड़की खानी पड़ती है, व्यापार में पार्टनर की झिड़की खानी, इन्कमटैक्स ऑफिसर की झिड़कियाँ खानी, नौकरी में साहब की झिड़की खानी। जहाँ-तहाँ झिड़कियाँ ही खाता

रहता है, फिर भी शर्म तक नहीं आती कि 'अरे, इतनी झिड़कियाँ खाकर जी रहा हूँ, वह किसलिए जी रहा हूँ?' लेकिन अब कहाँ जाए? फिर ढीठ हो जाता है!

संसार में कितने प्रकार की चुभन! एक ही प्रकार की चुभन काटती है, सभी चुभन एकसाथ एकदम से नहीं काटतीं। सभी बारी-बारी से काटती हैं। एक काट चुके तब फिर दूसरी आकर काटती है, फिर तीसरी आकर काटती है। चुभन निरंतर काटती ही रहती है। सभी उलझे हुए हों तो क्या हो सकता है? काटेंगे तो सही न? उलझाएँगे भी सही न?

यदि परेशान होकर जलसमाधि लेने जुहू के किनारे जाए तो पुलिसवाले पकड़ेंगे। 'अरे भाई, मुझे आत्महत्या करने दे न चैन से, मरने दे न चैन से।' तब वह कहेगा, 'ना, मरने भी नहीं दिया जा सकता। यहाँ तो आत्महत्या करने के प्रयास का गुनाह किया इसलिए तुझे जेल में डालते हैं।' मरने भी नहीं देते और जीने भी नहीं देते, इसका नाम संसार! इसलिए रहो न चैन से। ऐसा यह अनिवार्यतावाला जगत्!

इसलिए जैसे-तैसे करके, एडजस्ट होकर टाइम बिता देना चाहिए ताकि उधार चुक जाए। किसी का पंद्रह वर्ष का, किसी का पच्चीस वर्ष का, किसी का तीस वर्ष का, ज़बरदस्ती हमें उधार पूरा करना पड़ता है। नहीं पसंद हो तब भी उसी के उसी कमरे में साथ में रहना पड़ता है। यहाँ बिस्तर मेमसाहब का और यहाँ बिस्तर भाईसाहब का। मुँह टेढ़े फिराकर सो जाएँ तब भी विचार में तो मेमसाहब को भाईसाहब ही आते हैं न? चारा ही नहीं है, यह जगत् ही ऐसा है। उसमें भी सिर्फ पति को ही वे पसंद नहीं हैं ऐसा नहीं है, उन्हें भी पति पसंद नहीं होते। इसलिए इसमें मज़े लेने जैसा नहीं है।

अपने जाल में खुद ही फँसते हैं

जैसे यह मकड़ी जाला बुनती है, फिर खुद ही उसमें फँस जाती है। उसी तरह यह संसार का जाल भी खुद ने ही खड़ा किया है। पिछले जन्म में खुद ने माँग की थी। बुद्धि के आशय में टेंडर भरा था कि एक स्त्री तो चाहिए ही, दो-तीन कमरे होंगे, एकाध बेटा और एकाध बेटी और नौकरी इतना चाहिए। उसके बदले में वाइफ तो दी सो दी, लेकिन सास-ससुर, साला-साली, मौसेरी सास, चचेरी सास, फूफी सास, ममेरी सास... अरे फँसाव, फँसाव! इतना सारा फँसाव साथ में आएगा, यदि ऐसा पता होता तो ऐसी माँग ही नहीं करते! टेंडर तो भरा था सिर्फ वाइफ का, तो फिर यह सब क्यों दिया? तब कुदरत कहती है, 'भाई, वह अकेला तो नहीं दे सकते, ममेरी सास, फूफी सास वह सब देना पड़ता है। आपको उसके बिना अच्छा नहीं लगेगा। यह तो जब पूरा लंगर होगा, तभी असली मज़ा आएगा!' एक इतना सा लेने जाएँ, उसके साथ तो कितने बंधन, कितनी सारी परवशताएँ। वह परवशता फिर सहन नहीं होती।

जन्म लिया तब एक तरफ के रिश्तेदार थे, फादर-मदर और जब शादी की तब ससुर-सास, दादीसास, मौसीसास, वे सब मिले। ये उलझनें क्या कम थीं, कि और बढ़ाई!

प्रश्नकर्ता : ये मन, वचन, काया के लफड़े ही अच्छे नहीं लगते न अब तो!

दादाश्री : इसमें तो छः भागीदार है। शादी की तो उसमें और छः की भागीदारी, मतलब बारह भागीदारों का कोर्पोरेशन खड़ा हो गया ऊपर से। छः के बीच तो कितने लड़ाई-झगड़े चल ही रहे थे, वहाँ फिर बारह की लड़ाई खड़ी हो जाती है। फिर हर एक संतान के साथ छः नये भागीदार जुड़ते जाते हैं। यानी कितना फँसाव खड़ा हो जाता है!

इसके बजाय वह दुकान लगाए ही (शादी करे ही) नहीं तो क्या बुरा है? बिना दुकान के पड़े रहना अच्छा। ऐसी दुकान शुरू करके फिर फँस जाते हैं! इसे मनुष्यत्व कैसे कहा जाएगा?

लालच के पोइज़न से फँसा जगत्

प्रश्नकर्ता : लेकिन दादाजी, फँसाव का कारण क्या है?

दादाश्री : कुत्ते को एक पूड़ी दिखाए तो इतने से तो वह अपनी पूरी 'फैमिलि' को भी भूल जाता है। उसके बच्चे, पिल्ले वगैरह सभी को भूल जाता है और अपना स्थान, जिस मोहल्ले में रहता हो वह भी भूल जाता है और कहीं का कहीं जाकर खड़ा रहता है! लालच के मारे दुम हिलाता रहता है, एक पूड़ी के लिए! लालच, जिसका मैं कड़ा विरोधी हूँ। लोगों में जब मैं लालच देखता हूँ तब मुझे लगता है, 'ऐसा लालच?' 'ओपन पॉइज़न' (खुला ज़हर) है! जो मिले वह खाना, लेकिन लालच नहीं होना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : यानी, लालच में अच्छे-बुरे का विवेक नहीं रहता होगा न!

दादाश्री : लालची तो, जानवर ही कहो न उसे! मनुष्य के रूप में जानवर ही घूमते रहते हैं। थोड़ा-बहुत लालच तो हर किसी को होता है, लेकिन उस लालच को निबाह सकते हैं। लेकिन जिसे लालची ही कहा जाता है, उसे तो जानवर ही समझ लो न, मनुष्य के रूप में!

यानी लालचों से यह जगत् बंधा हुआ है। अरे! कुत्तों और गधों को लालच होता है, लेकिन हमें क्यों लालच होना चाहिए? क्या कभी लालच होना चाहिए?

चूहा पिंजरे में कब आता है? पिंजरे में कब पकड़ा जाता है?

प्रश्नकर्ता : लालच होता है, तब।

दादाश्री : हाँ, पराठे की सुगंध आई और पराठा खाने गया कि तुरंत अंदर फँस जाता है। पिंजरे में पराठा देखा कि बाहर रहे-रहे वह अधीर होता रहता है कि, 'कब घुसूं, कब घुसूं?' फिर अंदर घुसे तो चूहेदानी 'ऑटोमेटिक' बंद हो जाती है। अतः सर्व दुःखों की जड़ लालच है।

विषय का लालच, कैसी हीन दशा !

प्रश्नकर्ता : अब विषय में सुख लिया, तो उसके परिणाम स्वरूप ये क्लेश, झगड़े आदि सब होते हैं न?

दादाश्री : सब विषय में से ही खड़ा हुआ है और फिर सुख कुछ भी नहीं। सुबह-सुबह मानो अरंडी का तेल पीया हो, ऐसा चेहरा होता है!

प्रश्नकर्ता : इससे तो कँप-कँपी छूट जाती है कि इतने सारे दुःख ये लोग सहन करते हैं, इतने से सुख के लिए!

दादाश्री : वही लालच है न, विषय भोगने का! वह तो फिर जब वहाँ नर्कगति के दुःख भुगतता है न, तब पता चलता है कि क्या स्वाद है इसमें! और विषय का लालच, वह तो जानवर ही कह दो न! विषय के प्रति घृणा उत्पन्न हो तभी विषय बंद होता है, वर्ना विषय कैसे बंद होगा?

यह विषय की इच्छा तो बहुत जलन पैदा करती है, ज़बरदस्त जलन पैदा करती है। इसलिए ऐसा कहा है न कि 'विषय में पड़ना ही नहीं, वह बहुत जलन देता है।'

आबरूदार जगत् की पोलंपोल

यह तो सारा बनावटी जगत् है! और घर में कलह करके, रोकर और फिर मुँह धोकर बाहर निकलता है! हम पूछें, 'कैसे हो चंदूभाई?' तब वह कहे, 'बहुत अच्छा हूँ।' अरे, तेरी आँख में तो पानी है! मुँह धोकर आया है लेकिन आँख तो लाल दिखती है न?

यह बाहर तो पति छीट्-छीट् किया करता है। पत्नी की मार खुद खा रहा हो, फिर भी बाहर कहता

है कि, 'ना, ना, वह तो मेरी बेटी को मार रही थी!' अरे, मैंने खुद तुझे मार खाते हुए देखा था न? उसका क्या अर्थ? मीनिंगलेस।

इसके बजाय तो कह डाल न कि मेरे यहाँ यह दु:ख है। ये तो सभी ऐसा समझते हैं कि दूसरे के वहाँ दु:ख नहीं है। मेरे यहाँ ही दु:ख है। ना, अरे सभी रोए हैं। हर कोई घर से रोकर मुँह धोकर बाहर निकले हैं। यह भी एक आश्चर्य है! मुँह धोकर क्यों निकलते हो? धोए बगैर निकलो तो लोगों को पता चले कि इस संसार में कितना सुख है! मैं रोता हुआ बाहर निकलूँ, तू रोता हुआ बाहर निकले, सभी रोते हुए बाहर निकलें तब फिर पता चल जाएगा कि यह जगत् पोल ही है। छोटी उम्र में पिताजी मर गए तो शमशान में रोते-रोते गए। वापस आकर नहाए, फिर कुछ भी नहीं! नहाने का इन लोगों ने सीखलाया। नहला-धुलाकर चोखा कर देते हैं। ऐसा यह जगत् है! सभी मुँह धोकर बाहर निकले हुए हैं, सब पक्के ठग। उसके बदले तो खुला किया होता तो अच्छा। बहुत पक्के लोग हैं और यहाँ जो पक्का बना वह भगवान के यहाँ मारा ही गया समझो!

फँसा जगत् तीन वेदों में

इसलिए इस कुदरत के खेल में यदि सिर्फ ये तीन वेद नहीं होते तो संसार जीत जाते। ये तीन वेद नहीं होते तो क्या बिगड़ जाता? लेकिन बहुत कुछ है इनकी वजह से। अहोहो! इतनी अधिक रमणता है न इनकी वजह से! इस विषय को वेद के रूप में नहीं रखा होता, एक कार्य की तरह, जैसे आहार लेते हैं, इस प्रकार कार्य की तरह रखा होता तो हर्ज नहीं था। लेकिन इसे तो वेद की तरह रखा, वेदनीय के रूप में रखा। ये सारा झंझट ही तीन वेदों का है। भूख का शमन करने के लिए खाना है। भूख लगे उसका शमन करो। जहाँ पूरण करना पड़े, वह सब भूख कहलाती है। भूख, वह वेदना-शमन करने का उपाय है। इस तरह सभी विषय वेदना का शमन करने के उपाय हैं। जबकि इन लोगों को विषय का शौक़ हो गया है। अरे! शौक़ीन मत हो जाना। वहाँ लिमिट खोज निकालना और नोर्मेलिटी में रहना।

प्रश्नकर्ता : वेद के तौर पर नहीं लेना है, उस पर से आप क्या कहना चाहते हैं?

दादाश्री : लोग वेदते हैं यानी टेस्ट चखते हैं। टेस्ट के लिए चखना, टेस्ट के लिए खाना, वह भूख नहीं कहलाती। भूख मिटाने के लिए रोटी और सब्ज़ी खानी है, टेस्ट के लिए नहीं। टेस्ट के लिए खाने जाओगे तो रोटी और सब्ज़ी आपको भाएगा ही नहीं। टेस्ट लेने गया इसलिए वेद हो गया है। 'भूख' के लिए ही 'खाए', इतना तू समझदार हो जा। तो फिर मुझे तुझसे कुछ कहना ही नहीं पड़ेगा न! तीन वेदों से यह सारा जगत् सड़ रहा है, गिर रहा है।

लोकसंज्ञा से पड़ी डबल-बेड की प्रथा

आज के जमाने के सभी पढ़े-लिखे लोग कहते हैं, 'डबलबेड ला दीजिए बेटे के लिए।' घनचक्कर, अभी से ऐसा सीखा रहा है? डबलबेड होता होगा कहीं? वह तो 'वाइल्डनेस' (जंगलीपन) घुस गई है। यह ब्रह्मचारियों का देश, वानप्रस्थाश्रम की पूजा करनेवाला देश! डबलबेड का मतलब समझ गए न आप?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : शादी करवाने से पहले डबलबेड खरीदकर लाते हैं। बाप मँगवाता है, इसलिए बेटा ऐसा समझता है कि हमारे बाप-दादा भी इन्हें दिलवाते होंगे, इसलिए ये हमें दिलवा रहे हैं। परंपरागत रिवाज है यह। यह कितनी अधिक हिंसा! यह तो अपने महात्माओं से कह सकते हैं, बाहर तो नहीं बोला जा सकता। जिसे यह प्राप्ति हुई है, उनके लिए यह बात है। बाहर तो जो प्रवाह चल रहा है उस प्रवाह से उल्टा चलें, तो वह गुनाह है। वह कुदरती प्रवाह है।

यह बात तो सिर्फ महात्माओं के लिए है। यह सापेक्ष बात है, यह निरपेक्ष बात नहीं है। जो समझ सकें, उन्हीं के लिए है। बाहर तो यह बात कह ही नहीं सकते न! यह दुनिया क्या बदलनेवाली है? दुनिया तो अपने रंग-ढंग से ही चलती रहेगी। डबलबेड ही खरीदकर लाएँगे। मैं बाहर आपत्ति उठाऊँ तो लोग 'पागल' कहेंगे, मैं आपत्ति उठाऊँ ही नहीं न और मुझे 'पागल' कहें ऐसा कहूँ भी नहीं।

प्रश्नकर्ता : विषय के विरुद्ध बोलें तो बल्कि जगत् के लोग 'पागल' कहते हैं कि 'यह ओल्ड माइन्डेड है।'

दादाश्री : ऐसा नहीं बोल सकते और ऐसा कानून भी नहीं है न! और यह विषय है तो शादीवाले हैं, ये बाजेवाले हैं, ये मंडपवाले हैं। यानी यह है, तो बाकी सबकुछ है, इसलिए कुछ कह नहीं सकते। यह तो जिन्हें मोक्ष में जाना है, उनके जानने योग्य बात है। अन्य किसी को ऐसा जानने की ज़रूरत ही नहीं है न!

इस बारे में सोचा ही नहीं है न? ऐसा किसी ने बताया ही नहीं। इसके लिए तो उलाहना ही नहीं दिया किसी ने, समझाया ही नहीं। बल्कि इसे प्रोत्साहन देते रहे कि डबलबेड होना चाहिए, ऐसा चाहिए, वैसा चाहिए।

प्रश्नकर्ता : यह जो सोने की प्रथा है, ये कुछ प्रथाएँ ही गलत हैं!

दादाश्री : ये सभी प्रथाएँ गलत हैं। यह तो समझदार प्रजा नहीं है न, इसलिए सब उल्टा घुसा दिया है। फिर लड़के-लड़कियाँ ऐसा ही मान लेते हैं कि ऐसा ही होता है, यही मुख्य चीज़ है। उसमें भी यदि स्त्री का चित्त हमेशा उसके पति में ही रहता हो तो हर्ज नहीं है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन वह हमेशा रहता नहीं है न!

दादाश्री : अरे! जब दूसरा कुछ देखे तो फिर दूसरा झमेला खड़ा करते हैं। यानी झंझट है। यह जड़ से उखाड़ लेने जैसी चीज़ है। इसी वजह से सारा संसार कायम है।

डबलबेड का सिस्टम बंद करो और सिंगल बेड का सिस्टम रखो। पहले हिन्दुस्तान में कोई व्यक्ति इस तरह नहीं सोता था। कोई भी क्षत्रिय नहीं। क्षत्रिय तो बहुत पक्के होते हैं लेकिन वैश्य भी नहीं। ब्राह्मण भी ऐसे नहीं सोते थे, एक भी व्यक्ति नहीं! देखो, काल कैसा विचित्र आया है! अपने यहाँ तो घर में अलग रूम नहीं देते थे पहले।

पहले तो कभी किसी दिन ही पत्नी से भेंट हुई तो हुई, वर्ना राम तेरी माया! बड़े कुटुंब होते थे यानी संयुक्त कुटुंब होते थे। और आज तो रूम तो अलग हैं ही, बेड भी स्वतंत्र, डबलबेड। यह तो बहुत सूक्ष्म बात निकल रही है।

एकांत शैया की चमक-दमक

प्रश्नकर्ता : दादाजी, तो फिर बिस्तर कैसा होना चाहिए?

दादाश्री : अरे, कहीं एक बिस्तर में सोया जाता होगा! अरे! कैसे आदमी हैं ये? उस स्त्री की शक्ति भी नष्ट हो जाती है और दूसरा, उसकी (पुरुष की) शक्ति, दोनों की शक्ति डिफॉर्म हो जाती है। फॉरेनवालों के लिए ठीक है, लेकिन उनका देखकर हम भी ले आए डबलबेड, किंग बेड!

खरे पुरुष कैसे होते हैं? हमारे गाँव का एक किस्सा सुनाता हूँ, ब्रह्मचर्य की बात निकली है तो। मुझे कई अच्छे-अच्छे लोग मिले थे। बचपन से ही मैं ऐसे संयोग लेकर आया था। सत्तर साल के एक प्रभावशाली पुरुष थे। उनकी याददाश्त तेज़, चेहरे पर नूर भी कितना था! मैंने सोचा, ये इतने प्रभावशाली कैसे होंगे? इसमें कुछ तो ज्ञान-वान होगा? या तो 'ज्ञानी' प्रभावशाली होते हैं या फिर 'ब्रह्मचारी' कुछ

प्रभावशाली होता है। फिर मुझे लगा कि इनमें कुछ ज्ञान तो नहीं हो सकता, इसलिए चलो पता लगाते हैं कि क्या कारण है इसके पीछे? वे हमारे रिश्तेदार लगते थे और तब मेरी उम्र थी सत्रह साल की। ये पटेल ऐसे दिखते हैं, जबकि दूसरे सब पटेल ऐसे दिखते हैं। इन पटेल में कुछ ग़ज़ब का है। उनके बेटे भी बड़े सुंदर थे!

एक दिन मैं उनके घर गया। तब मैंने कहा, 'चाचा, मैं अंदर जाकर आऊँ?' वे आँगन में बैठे रहते थे। घर भी था और आँगन भी था बैठने के लिए। बैठकवाला कमरा भी था नया, अलग। घर से दो-सौ, तीन-सौ फुट दूर तब वे बोले, 'बैठ न! अब यहीं चाय मँगवा देता हूँ। तू बैठ यहाँ मेरी चाय आएगी। तू भी थोड़ी चाय पीना।' मुझे यह अच्छा लगा। मुझे तो किसी न किसी बहाने उनसे बात करनी थी। तब फिर मैंने पूछा, 'चाचाजी, आप कहाँ सोते हैं?' तब कहा, 'मैं यहीं सो जाता हूँ।' मैंने पूछा, 'कितने सालों से?' तब कहा, 'जब से शादी की, तभी से यहाँ सोता हूँ।' 'क्या?' मैं तो चकित हो गया। मैंने सोचा, 'यह क्या?' फिर मैं ज़रा गहराई में गया, 'चाचाजी, मुझे इसमें इन्टरेस्ट है। ज़रा बताइए न? चाचीजी कभी यहाँ आती हैं?' वे बोले, 'महीने में दो दिन बुलाता हूँ, बस।' मैंने सोचा, 'यह चमक किसकी? यह तेज किस वजह से है? कहाँ से लाए? आप पाटीदार!' तब मैंने पूछा, 'आप क्या करते हैं?' तब उसने बताया, 'कभी भी एक ही बिस्तर में पत्नी के साथ नहीं सोया हूँ और पैंतीस साल से वानप्रस्थाश्रम में ही हूँ।' 'धन्य हैं चाचाजी इस उम्र में भी!' मैं तो दंग रह गया, तब से मुझे भी यह रोग लग गया। इसके बाद अलग बिस्तर के बारे में समझने लगा और आजकल तो बाप बेटे से कहता है, 'जा डबलबेड ले आ, भले ही तीन सौ डॉलर का मिले।' तब वह ऐसा समझता है कि 'मेरे पिता भी डबलबेड में सोते थे और मेरे दादाजी भी डबलबेड में ही सोते होंगे।' अरे! दादाजी का था ही नहीं ऐसा डबलबेड! ऐसा नहीं बोलना चाहिए, फिर भी देखो बोलता हूँ न? ऐसा नहीं बोलना चाहिए न?

प्रश्नकर्ता : क्यों नहीं?

दादाश्री : किसी को दुःख हो सकता है न! ऐसे बोलते हैं, लेकिन हम तो ज्ञानीपुरुष हैं इसलिए किसी को दुःख नहीं होता। मैं कैसा भी बोलूँ, फिर भी ज्ञानीपुरुष को अंदर वीतरागता रहती है और राग-द्वेष नहीं होते। हमें किसी के प्रति चिढ़ नहीं है, इसलिए हम बोल सकते हैं। लेकिन आप यह समझ गए न? ब्रह्मचर्य के बारे में पूछा इसलिए मुझे खुल्लम्खुला कहना पड़ा, वर्ना मैं कहता नहीं हूँ ऐसा।

कलियुग की दुःखदायी दशा, पैसे देकर भुगतते हैं

पहले तो ऐसा रिवाज़ था कि शादी के समय इतनी ही शर्त होती थी कि एक-दो बच्चे पैदा हो जाएँ, उतना ही विषय होता था। लेकिन यह तो बच्चों के कारखाने खोल दिए! चार-आठ होते हैं, किसी के डज़न भी हो जाते हैं! बच्चों की ज़रूरत नहीं हो, फिर भी विषय में पड़ता है। अरे! बच्चों की ज़रूरत नहीं है तो अब तुझे विषय का क्या करना है? लेकिन उसमें उसे टेस्ट आता है! बाकी (पहले तो) बिल्कुल भी विषय नहीं। विषय में वे लोग पड़ते ही नहीं थे। उन लोगों को लाख रुपये दो फिर भी विषय करने को तैयार नहीं होते थे। उन्हें इतनी जागृति रहती थी कि मैं विषय करूँ, तो फोटो कैसा लगेगा! जबकि आज तो पाँच हज़ार देकर विषय करते हैं न? कोई भान ही नहीं है इन लोगों को! आपको ऐसा लगा है न?

प्रश्नकर्ता : एक्ज़ेक्ट है दादा, हन्ड्रिड परसेन्ट करेक्ट है।

दादाश्री : तब लोगों में क्यों ऐसी पोल (जान-बूझकर दुरुपयोग करना, लापरवाही) चल रही होगी? कोई भान ही नहीं है कि कहाँ जा रहे हैं? 'ज्ञानीपुरुष'

से विषय की बातें सुनी नहीं हैं, वर्ना विषय रहता ही नहीं, गायब ही हो जाता!

कषायों के मूल में हैं, विषयों के भँवर

प्रश्नकर्ता : मैंने कई अच्छे महात्मा देखे हैं, जो बड़ी-बड़ी ज्ञान की बातें करते हैं, लेकिन उनका स्थूल क्लेश नहीं जाता। सूक्ष्म क्लेश तो शायद हो भी सही, वह नहीं जाता लेकिन स्थूल क्लेश अपने से क्यों नहीं जा सकता?

दादाश्री : ऐसा! इन सबका मूल है विषय। यदि दुनिया में सबसे बड़ा फँसाव कोई हो, तो वह विषय है और उसमें कुछ भी सुख नहीं है। सुख में कुछ भी नहीं और उसकी वजह से झगड़े बेहिसाब होते हैं! घर में लड़ाई-झगड़े क्यों होते हैं? दोनों विषयी होते हैं, फिर सारा दिन टकराव होता रहता है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन मुझे यह समझ में नहीं आता कि झगड़ा और विषय, दोनों का मेल कैसे बैठेगा? मारपीट तक का क्लेश और विषय, उन दोनों का मेल बैठेगा? क्या मनुष्य तब अंधा हो जाता होगा?

दादाश्री : अरे! आमने-सामने मारते हैं।

प्रश्नकर्ता : हाँ, लेकिन जब विषय के परमाणु खड़े हों, तब क्या अंधा हो जाता होगा? उन्हें अंदर से याद नहीं आता होगा कि हम मारपीट कर रहे थे?

दादाश्री : मारपीट करें, तभी तो उन्हें विषय का मज़ा आता है न! और फिर स्वमान जैसा कुछ भी नहीं। पत्नी पति को धौल लगाए तो पति पत्नी को धौल लगाता है। फिर पति हमसे आकर कह जाता है कि 'मेरी पत्नी मुझे मारती है!' तब मैं कहता भी हूँ कि, 'हें! तुझे तो ऐसी मिली? फिर तो तेरा कल्याण हो जाएगा!'

प्रश्नकर्ता : यह सब फज़ीता सुनते ही यों हैरान हो जाते हैं कि ये लोग कैसे जीते होंगे?

दादाश्री : फिर भी जी रहे हैं न! तूने दुनिया देखी न! और जीएँ नहीं तो क्या करें? मर थोड़े ही सकते हैं?

प्रश्नकर्ता : लेकिन हमें यह सब देखकर कँपकँपी छूट जाती है। फिर ऐसा होता है कि हर रोज़ ऐसे झगड़े चलते रहते हैं फिर भी पति-पत्नी को इसका हल लाने का मन नहीं होता, यह भी आश्चर्य है न?

दादाश्री : ये तो, कई बरसों से, जब से शादी की, तभी से ऐसा ही चल रहा है। शादी की तभी से एक ओर झगड़े भी जारी हैं और एक ओर विषय भी ज़ारी है! इसीलिए तो हमने कहा कि आप दोनों ब्रह्मचर्यव्रत ले लो, तो लाइफ उत्तम हो जाएगी। अत: ये सब लड़ाई-झगड़े वे अपनी गरज़ के मारे करते हैं। पत्नी जानती है कि ये आख़िर कहाँ जाएँगे? पति भी जानता है कि यह कहाँ जाएगी? ऐसे आमने-सामने गरज़ की वजह से चल रहा है।

विषय में सुख की तुलना में विषय की परवशता के दु:ख अधिक हैं, ऐसा जब समझ में आएगा, तब फिर विषय का मोह छूटेगा और तभी स्त्री जाति पर प्रभाव डाल सकेगा और उसके बाद वह प्रभाव निरंतर प्रताप में परिणमित होता रहेगा। वर्ना इस जगत् में बड़े-बड़े महान पुरुषों ने भी स्त्री जाति से मार खाई है। वीतराग ही इस बात को समझ सके थे! इसलिए उनके प्रताप से ही स्त्रियाँ दूर रहती थीं। वर्ना स्त्री जाति तो ऐसी है कि किसी भी पुरुष को देखते ही देखते लट्टू बना दे, उनमें ऐसी शक्ति है। उसे ही 'स्त्री चरित्र' कहा है न! स्त्री से तो दूर ही रहना चाहिए। उसे किसी प्रकार से लपेट में मत लेना, वर्ना आप ही उसकी लपेट में आ जाओगे। और यही का यही झंझट कितने जन्मों से हुआ है न!

विषय-कषाय की जड़ में है 'अज्ञानता'

प्रश्नकर्ता : राग-द्वेष का मूल स्थान ही यह है?

दादाश्री : हाँ, जगत् में हर चीज़ का मूल यहीं से शुरू हुआ है। और शादी करने के बाद पति मारता है और उसके मारने से पहले पत्नी भी मारती है! इससे दोनों ज़ोरदार और मज़बूत बन जाते हैं!

कलह किस कारण से होती है? अब्रह्मचर्य की वजह से। विषय पर कंट्रोल नहीं होने के कारण है यह सब कलह। वर्ना स्त्री-पुरुषों के बीच कलह क्यों होती? दुनिया में, विषय पर काबू रखनेवालों में कलह नहीं होती, सोचने पर क्या आपको ऐसा लगता है?

प्रश्नकर्ता : पशुओं में विषय है लेकिन कषाय नहीं है इसका कारण क्या है?

दादाश्री : यदि दोष विषय का होता तो इन सभी जानवरों में भी कषाय खड़े हो जाते। अत: दोष अज्ञानता का है। इन जानवरों की अज्ञानता गई नहीं है। उनमें अज्ञानता है लेकिन उनके विषय लिमिटेड हैं। इसलिए कषाय होते ही नहीं, कषाय बढ़ते ही नहीं। जबकि लोगों के कषाय तो अन्लिमिटेड होते हैं।

जब विषय में अज्ञानता होती है, तब कषाय खड़े होते हैं और ज्ञान हो तो कषाय नहीं होते। कषाय कहाँ से जन्मे? तब कहे, विषय में से। अत: ये जितने भी कषाय खड़े हुए हैं, वे सब विषय में से खड़े हुए हैं। लेकिन इसमें विषय का दोष नहीं है, अज्ञानता का दोष है। रूट कॉज़ क्या है? अज्ञानता। क्रमिक मार्ग में पहले विषय बंद करने पड़ते हैं, तभी कषाय बंद होते हैं। इसीलिए तो सभी विषयों का त्याग कर-करके ढक्कन लगाना पड़ता है न! वे भी ऐसे पेचवाले ढक्कन कि जो अपने आप खुल न जाएँ। ऐसे ढक्कन नहीं होंगे तो ढक्कन ढीले पड़ जाएँगे। भोजन में सबकुछ एक साथ मिलाकर खाते हैं ताकि जीभ का विषय नहीं चिपके। उसी प्रकार आँख का विषय नहीं चिपके, कान का विषय नहीं चिपके, नाक का विषय नहीं चिपके, स्पर्श का विषय नहीं चिपके, ऐसे पेचवाले ढक्कन लगाने पड़ते हैं।

आप यदि समकित में रहो तो आपको विषय बाधक नहीं होगा। क्योंकि विषय, पिछले जन्म का परिणाम है, इस जन्म का नहीं है वह। समकित में रहना और कषाय, वे दोनों एक साथ नहीं हो सकते। कषाय तो परभव का कारण है। इस तरह यदि कषाय और विषय को जुदा किया होता तो लोग विषय से इतने भयभीत नहीं होते, लेकिन वे तो कहेंगे कि ऐसा तो हो ही नहीं सकता न! विषय तो होना ही नहीं चाहिए न!

अब तो डिसिज़न लो

यह स्त्री-पुरुष का जो विषय है न, उसमें दावे किए जाते हैं। क्योंकि इस विषय में दोनों की मालिकी एक है और मत दोनों के अलग हैं। इसलिए यदि स्वतंत्र होना हो तो इस गुनहगारी में नहीं आना चाहिए और जिसके लिए यह गुनहगारी अनिवार्य है, उसे उसका *निकाल* करना पड़ेगा।

प्रश्नकर्ता : गुनहगारी में नहीं आना पड़े, उसके लिए क्या शादी नहीं करनी चाहिए?

दादाश्री : शादी नहीं करनी चाहिए या करनी चाहिए, वह अपनी सत्ता की बात नहीं है। तुझे निश्चयभाव रखना चाहिए कि ऐसा नहीं हो तो उत्तम। जिस तरह गाड़ी में से गिरना चाहिए, क्या किसी की ऐसी इच्छा होती है? अपनी इच्छा कैसी होती है कि गिर न पड़ें तो अच्छा। फिर भी अगर गिर जाएँ तो क्या होगा? उसी तरह शादी के लिए 'गिर न पड़ें तो अच्छा।' अपने भाव ऐसे रहने चाहिए।

प्रश्नकर्ता : यानी शादी करना गाड़ी में से गिरने के बराबर है?

दादाश्री : उसी तरह का है न, लेकिन वह मजबूरन ही होना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : फिर उसे नाटक रूप में लेना पड़ेगा?

दादाश्री : और क्या? फिर चारा ही नहीं रहेगा न!

प्रश्नकर्ता : शादी करने में इतना जोखिम है, वह सुख दाद जैसा है, तो फिर ये जो सब लोग शादी करते हैं उन्होंने क्या मजबूरन शादी की है? शादी क्यों करते हैं?

दादाश्री : लोग तो ख़ुशी से, शौक से शादी करते हैं। 'इसमें दुःख है,' ऐसा नहीं जानते। वे तो ऐसा ही समझते हैं कि अंततः इसमें सुख है। लोग ऐसा समझते हैं कि थोड़ा बहुत नुकसान है लेकिन कुल मिलाकर फायदेवाली चीज़ है। जबकि हकीकत में बिल्कुल नुकसान ही है। वह जब 'इन्कमटैक्स' ऑफिस में जाता है तब पता चलता है कि यह सारा नुकसान ही था। और उसमें भी अपने हाथ में सत्ता नहीं है न! इस जन्म में अपने हाथ में नहीं है न? इस जन्म में तो अब नये सिरे से हमें 'डिसिज़न' आ जाता है, इसलिए साफ हो जाता है।

विस्मृत हो जाता है आत्मा बेडरूम में

प्रश्नकर्ता : ज्ञान लेने के बाद, निरंतर केवल यही भाव करता हूँ, फिर भी यह छूटता नहीं है।

दादाश्री : नहीं, लेकिन वह तो पहले का हिसाब है न! इसलिए छुटकारा नहीं हो सकता न?

प्रश्नकर्ता : विषय नहीं है लेकिन *हूँफ* के लिए। ऐसा होता है कि 'नहीं, साथ में ही सोना है।'

दादाश्री : नहीं, ऐसा नहीं है लेकिन वह तो जो हिसाब है न, वह हिसाब सारा चुकता हो रहा है। हाँ, हिसाब चुक गया, ऐसा कब कहा जाएगा? साथ में सोएँ, लेकिन वह सब अच्छा नहीं लगे, अंदर अच्छा नहीं लगे और सोना पड़े, तब हिसाब चुक जाता है! लेकिन अच्छा लग रहा है या नही इतना तो पूछ लेना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : खुद को पसंद है, लेकिन अंदर से प्रज्ञाशक्ति अथवा समझ चेतावनी देती है।

दादाश्री : मन को भले ही पसंद हो, लेकिन आपको पसंद है?

आपको समझ में आया न, कि यह भूल कहाँ है, कैसी हुई है? और भूल मिटानी तो होगी न? जो प्रारब्ध में हो वह भुगतना, लेकिन भूल तो मिटानी पड़ेगी न? भूल नहीं मिटानी पड़ेगी?

अरे भाई, 'बेडरूम' तो नहीं बनाने हैं। वह तो, एक ही रूम में सब साथ में सो जाना और बेडरूम तो संसारी जंजाल! यह तो बेडरूम बनाकर पूरी रात संसार के जंजाल में पड़ा रहता है। फिर आत्मा की बात तो कहाँ से याद आएगी? बेडरूम में आत्मा की बात याद आती होगी?

यह तो मनुष्यपन खो देते हैं। सारे ब्रह्मांड को हिला दें ऐसे लोग, देखो न, यह दशा तो देखो! यह हीन दशा देखो! आप समझे मेरी बात?

आत्मा में कितनी शक्ति होगी? अनंत शक्तियाँ हैं आत्मा में। लेकिन सारी शक्तियाँ आवृत हुई पड़ी हैं। जब आप 'ज्ञानीपुरुष' के पास जाते हो, तब वे आवरण हटा देते हैं और आपकी शक्तियाँ खिल उठती हैं। भीतर सुख भी अपार है, फिर भी विषयों में सुख खोजते हैं।

ऐसे गंदगी दिखे तब वह जाए !

प्रश्नकर्ता : तो इस विषय से दूर कैसे जा सकते हैं?

दादाश्री : यदि एकबार ऐसा समझ ले कि यह गंदगी है तो दूर जा सकेगा। बाकी, यह गंदगी है वह भी नहीं समझा है। अत: पहले ऐसी समझ आनी चाहिए। हमें, ज्ञानियों को तो सब ओपन दिखाई देता है। उसमें क्या-क्या होगा? तो तुरंत ही मति चारों ओर सभी जगह घूम आती है। अंदर कैसी गंदगी है और क्या-क्या है, वह सब दिखला देती है। जबकि यह तो विषय हैं ही नहीं, विषय तो जानवरों में होते हैं। यह तो सिर्फ आसक्ति ही है। बाकी विषय तो किसे कहते हैं कि जो परवश होकर करना पड़े। द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव के आधार पर परवशता से करना पड़े। जो इन बेचारे जानवरों में होता है।

इस ब्रह्मचर्य की कोई क़ीमत होगी न? अब्रह्मचर्य में क्या गुनाह है, यह लोगों के ध्यान में है ही नहीं और मैं कहीं साधु बनने को नहीं कह रहा हूँ। संसारी रहकर ब्रह्मचर्य का पालन करो। और संसारी रहकर जो ब्रह्मचर्य पालन नहीं करते, वह पाशवता ही है। सरेआम, खुली पाशवता है। ओपन पाशवता!

प्रश्नकर्ता : तो फिर जब परवशता से नहीं करे, तब आसक्ति कहलाएगी?

दादाश्री : आसक्ति ही कहलाएगी न! ये तो शौक़ से ही करते हैं। दो पलंग मोल लाते हैं और वे एक साथ रख देते हैं, एक बड़ी मच्छरदानी लाते हैं। अरे! यह भी कोई धंधा है? मोक्ष में जाना हो तो मोक्ष में जाने के लक्षण होने चाहिए। मोक्ष में जाने के लक्षण कैसे होते हैं? एकांत शैय्यासन के। शैय्या और आसन एकांत (अलग ही) होते हैं।

जब तक जिस बारे में अंध है, तब तक उस बारे में दृष्टि खिलती ही नहीं, बल्कि और ज़्यादा अंध होता जाता है। उससे दूर रहने के बाद उससे छूट सकता है। फिर उसकी दृष्टि खिलती जाएगी, उसके बाद समझ में आता जाएगा।

खोखले जगत् के खोखले लोग नहीं खोलते हकीकत

प्रश्नकर्ता : इसमें सच्चा सुख नहीं है, लेकिन एकदम लिमिटेड टाइम के लिए तो है, फिर भी यह छूटता नहीं है न!

दादाश्री : नहीं, इसमें सुख है ही नहीं। यह तो मान्यता ही है सिर्फ। यह तो मूरख लोगों की मान्यता ही है। यह तो, हाथ पर हाथ रगड़े तब सुख लगे तो समझें कि यह बिल्कुल सही सुख है। लेकिन यह विषय तो निरी गंदगी ही है। यदि कोई बुद्धिमान व्यक्ति इस गंदगी का हिसाब लगाए तो उस गंदगी की ओर जाएगा ही नहीं। अभी यदि केले खाने हों तो उसमें गंदगी नहीं है और उसे खाने में सुख है। लेकिन इसने तो निरी गंदगी को ही सुख माना है। किस हिसाब से मानता है, वह भी समझ में नहीं आता।

यह विषय ऐसी चीज़ है कि एक ही दिन का विषय तीन दिनों तक किसी भी प्रकार की एकाग्रता नहीं होने देता। एकाग्रता डाँवाडोल होती रहती है। यदि कोई महीनेभर विषय का सेवन नहीं करे तो उसकी एकाग्रता डाँवाडोल नहीं होगी। आपको आत्मा का सुख बरतता है, उसके आधार पर आप यहाँ आते रहते हो। आपकी दृष्टि यहीं पर होती है, फिर भी यह सुख आत्मा का है या विषय का है, आपको वह भेद मालूम नहीं पड़ता। किसी को अन्जाने में पहले जलेबी खिलाएँ और बाद में चाय पिलाएँ तो? उसी प्रकार जलेबी की वजह से चाय फीकी लगती है, ऐसा भेद इसमें मालूम नहीं पड़ता।

प्रश्नकर्ता : ऐसा तो किसी ने बताया ही नहीं था न!

दादाश्री : लोगों को सब घोटालेवाला चाहिए, इसलिए कोई कहेगा ही नहीं न! लोग खुद गुनहगार हैं इसलिए वे नहीं बोलते न! जो गुनहगार नहीं हैं,

वे ही बोलेंगे। क्योंकि एक ही बार का विषय कितने ही दिनों तक इन्सान की भ्रांति छूटने नहीं देता। भ्रांति यानी डिसीज़न नहीं आ पाता कि यह आत्मा का सुख है या भौतिक सुख है, इसका भान नहीं होने देता। इस ज्ञान के साथ यदि ब्रह्मचर्यव्रत ले ले, तो फिर माथापच्ची ही नहीं न! परेशानी में भी सुख बरतता रहेगा। ये लोग ऐसा क्यों भूल जाते होंगे कि माँस की पुतली है? ऐसा है न मूर्छावश वह उसमें से जैसे-जैसे सुख लेता है, वैसे-वैसे उस पर मूर्छा छाती जाती है। यदि छः-बारह महीनों तक उसमें से सुख नहीं ले, तब फिर उसकी मूर्छा जाएगी। तब फिर उन्हें रेशमी चद्दर में लिपटा हुआ माँस ही दिखाई देगा।

विषय से जरा दूर रहकर तो देखो

विषय में तो मरने जैसा दुःख होता है। विषय हमेशा परिणाम में कड़वा है। शुरूआत में उसे ऐसा लगता है कि यह विषय सुखदायी है, लेकिन परिणाम में तो कड़वा ही है। उसका विपाक भी कड़वा है। इसके बाद थोड़ी देर के लिए तो इन्सान मुर्दे जैसा हो जाता है लेकिन उसके सिवा कोई चारा भी नहीं है न? वह भी अनिवार्य है। अब आप किस तरफ जाओगे? ऐसा करने जाओगे तो भी अनिवार्य है और वैसा करने जाओगे तो भी अनिवार्य है। इसलिए मेरा यह कहना है कि अनिवार्य को अनिवार्य जानकर उसकी इच्छा छोड़ दो। 'उसमें मेरी मर्ज़ी है', वह छोड़ दो।

आत्मा का सच्चा सुख तो ये ब्रह्मचारी ही चख सकते हैं। जो स्त्रीरहित पुरुष हैं, वे ही चख सकते हैं। फिर उन्हें जल्दी 'स्टडी' (अभ्यास) हो जाती है। क्योंकि जो शादीशुदा हैं उनके पास, यह सच्चा सुख है या वह, उन दोनों की तुलनात्मक दृष्टि नहीं है। फिर भी चलने दो न गाड़ी! जो शादीशुदा हैं उनसे हम ऐसा थोड़े ही कह सकते कि तू कुँवारा हो जा! इसलिए हमने उन्हें 'समभाव से *निकाल*' करने को कहा है। लेकिन बात को समझो, ऐसा भी कहते हैं।

छः-बारह महीने विषयसुख छोड़ दे तो समझ में आएगा कि आत्मा का सुख कहाँ से आता है! यह तो विषय है, इसलिए तब तक उसे, इनमें से सच्चा सुख कौन सा है, इसका उसे पता नहीं चलता। इसलिए हम कहते हैं न कि विषय में से ज़रा निकलकर तो देखो तो सच्चे सुख का पता चलेगा। विषय में सुख है ही नहीं। विषय में तो कभी सुख होता होगा? दाद हो जाए और इस तरह रगड़ता रहे, दाद को खुजलाता रहे तो बहुत मीठा लगता है, लेकिन बाद में उसे जलन होती है। यह उसके जैसा है।

अजागृति से फँसे विषय की गारवता में

इस जगत् के लोग विषयों की फ्रीज़ जैसी ठंडक में पड़े हुए हैं। विषयरूपी *गारवता* है, उसमें पड़े हुए हैं। वह कीचड़ निरी बदबू मारता है, इस *गारवता* में सारा जगत् फँसा हुआ है। भले ही फँसे हुए हों। फँसे हैं, उसमें परेशानी नहीं है, कितनी मुद्दत के लिए फँसे हैं उसमें भी परेशानी नहीं है, लेकिन आज से नक्की तो करना चाहिए न कि अब यह नहीं चाहिए। कभी भी नहीं। सदा उसके विरोधी तो रहना चाहिए न? वर्ना यदि दोनों एकमत हो गए, अंदर-बाहर एकमत हो गया कि खत्म हो गया। आप में कितना एकमत होता है या अलग रहता है?

प्रश्नकर्ता : अलग रहता है।

दादाश्री : हमेशा? मुझे नहीं लगता कि ये शूरवीर अलग रह पाएँ, ऐसे हैं। इन शूरवीरों की क्या बिसात कि जिनकी जागृति मंद हो चुकी है! वर्ना विषय तो खड़ा ही नहीं होगा न! और शायद यदि खड़ा हो जाए तो भी पूर्व प्रयोग होने के कारण। लेकिन तब खुद की दृष्टि मिठासवाली नहीं होती, निरी ऊबवाली दृष्टि होती है। जैसे नापसंद भोजन

खाना पड़े, तब उसका चेहरा कैसा होता है? खुश होता है? चेहरा भी उतर जाता है न। लेकिन खाए बगैर चारा नहीं है। भूख के मारे खाना पड़ता है। यानी उसे नापसंद है।

जगत् ऐसी *गारवता* में पड़ा हुआ है कि निकले कैसे? जब ज़बरदस्ती खाना पड़े, तब क्या चेहरा खुश होता है? लेकिन ये चेहरे तो उतरे हुए होते ही नहीं, जैसे सभी बगीचे में टहलने निकले हों, ऐसे चेहरे दिखते हैं! वर्ना हमारे शब्द नोट करके यदि उसके अनुसार चले न तो पिछले सभी दोष निकल जाएँ। बाकी पूर्व प्रयोग तो है ही, उसके लिए हमसे मना नहीं किया जा सकता न! यह जो खाना पड़ता है, वह पूर्व प्रयोग के आधार पर है, लेकिन अपना चेहरा उतरा हुआ होना चाहिए। सामनेवाला कहे कि 'खाने के लिए बैठिए,' तब खुद ज़बरन बेमन से खाने बैठे। इस तरह बेमन से कभी भी खाया है क्या? उसमें बहुत मज़ा आता है? यानी इसका कानून यदि समझ जाए कि इसके प्रति चिढ़, चिढ़ और चिढ़ ही रहनी चाहिए। लेकिन यह तो तालाब देखा कि भैंस खुश! फ्रीज़ आया! अब क्या हो सकता है इसका!

यह सब *गारवता* में फँस चुका है, इसलिए प्रभु से विनती करता है, *'हे प्रभु, रह्यु छे फसी!'*, अब इस *गारवता* में से छूटे तो निबेड़ा आए। वह गंध, वह फोटो भी कैसा आएगा? ऐसा सब दिन-रात मन में खटकता रहता है। लेकिन यह तो चाय की तरह पीता है। जब चाय पीनी हो, तब कहेगा, 'चाय बनाओ ज़रा।' फिर चाय बनाकर आराम से पीता है! ऐसा कैसे चलेगा? फिर भी कुछ सोचे तो भी उत्तम है।

भगवान भी डरते थे, इसलिए सावधान

इसे समझने बैठें तो बहुत गहन है, लेकिन फिर भी आसान है। कहीं पर भी विरोधाभास उत्पन्न नहीं होता। यह सैद्धांतिक ज्ञान है और सबल अनुभवजन्य ज्ञान है। अपना तो यह अक्रम मार्ग है, इसलिए हमने खाने-पीने की छूट दी है, हर प्रकार से छूट दी है, लेकिन हम विषय के सामने सावधानी रखने को कहते हैं। बाकी, विषय से तो भगवान भी डरते थे। जबकि विषय में तो अत्यधिक तन्मयाकार हो जाता है। मनुष्य का स्वभाव हरहाया है। हरहाया मतलब जहाँ देखा वहाँ मुँह डाला, जहाँ देखा वहाँ मुँह डाला। बाकी सभी चीज़ों में रूप देखना है, इसमें रूप है ही कहाँ कि उसे देखें? ये तो ऊपर से ही सुंदर दिखते हैं। आम तो अंदर से कच्चा हो, फिर भी स्वादिष्ट लगता है और दुर्गंध भी नहीं आती और इसे यदि काटें तो दुर्गंध का अंत ही नहीं आए!

अत: यहीं पर माया है। पूरे जगत् की माया यहीं भरी पड़ी है। स्त्रियों की माया पुरुषों में है और पुरुषों की माया स्त्रियों में है।

प्रश्नकर्ता : इसी कारण सब अटका हुआ है न?

दादाश्री : हाँ, इसी कारण अटका हुआ है।

लाचारी न लगे, उतनी बाउन्ड्री में आ जाओ

आपको यह बाउन्ड्री बता देता हूँ। किसी भी चीज़ के लिए याचकता नहीं होनी चाहिए। नहीं मिले तो कहता है, 'जलेबी लाओ न थोड़ी, जलेबी लाओ।' छोड़ न मुए, अनंत जन्मों से जलेबियाँ खाई हैं, फिर भी अभी तक याचकता रखते हो? जिसे लालसा होती है, उसे याचकता होती है। याचकता, वह लाचारी है एक प्रकार की!

विषय यानी क्या? भोजन की थाली भी एक विषय है। अब भोजन आया और आपने कल पूरे दिन उपवास किया था और आज ग्यारह बजे भोजन लाकर रखे, उसमें आम आदि सबकुछ हो और फिर तुरंत उठाकर ले जाए। अब खाया नहीं, उससे पहले तो उठाकर ले जाएँ तो उस घड़ी अंदर परिणाम नहीं

बदलें, तब समझना कि 'मुझे इस विषय में हर्ज नहीं है।' विषय के लिए याचकता नहीं होनी चाहिए। लाचारी नहीं होनी चाहिए।

रोंग बिलीफ की जड़ को अब नष्ट करो

प्रश्नकर्ता : यानी ज्ञान के बाद सिर्फ 'बिलीफ' (मान्यता) ही बदलनी है?

दादाश्री : हाँ, लेकिन ऐसा है न 'राइट (सही) श्रद्धा पूरी बैठ गई,' ऐसा कब कहा जाएगा कि जब सारी रोंग (गलत) श्रद्धा खत्म हो जाए तब। अब मूल रोंग बिलीफ हमने खत्म कर दी लेकिन इस विषय में तो हम थोड़ी-बहुत रोंग श्रद्धा फ्रैक्चर कर देते हैं। बाकी क्या यह पूरा फ्रैक्चर करने हम फालतू बैठे हैं?

यानी विषय में से रस निर्मूल कब होगा कि जब पहले उसे खुद को ऐसा लगे कि 'यह मिर्च खा रहा हूँ, इससे मुझे तकलीफ होती है, ऐसे नुकसान करती है,' उसे ऐसा समझ में आना चाहिए। जिसे मिर्च का शौक़ हो, उसे जब गुण-अवगुण समझ में आ जाएँ और विश्वास हो जाए कि यह मुझे नुकसान ही करेगी तो वह शौक़ जाएगा। अब यदि हमें ऐसा यथार्थ रूप से समझ में आ जाए कि 'शुद्धात्मा में ही सुख है,' तो विषय में सुख रहेगा ही नहीं। फिर भी यदि विषय में सुख महसूस होता है वह पहले का (प्रतिक्रिया) रीएक्शन है!

प्रश्नकर्ता : विषय में सुख है, वह जो बिलीफ पड़ी हुई है, वह किस तरह निकलेगी?

दादाश्री : यह चाय मज़ेदार मीठी लगती है, वह अपना रोज़ का अनुभव है, लेकिन जलेबी खाने के बाद कैसी लगेगी?

प्रश्नकर्ता : फीकी लगेगी।

दादाश्री : तब उस दिन पता चल जाता है, बिलीफ बैठ जाती है कि जलेबी खाई हो तो चाय फीकी लगती है। इसी तरह जब आत्मा का सुख रहता है, तब अन्य सब फीका लगता है।

अभिप्राय बदलने पर दोष निर्मूल

प्रश्नकर्ता : लेकिन मानसशास्त्री कहते हैं कि विषय बंद हो ही नहीं सकता, अंत तक रहता है। तो फिर वीर्य का ऊर्ध्वगमन होगा ही नहीं न?

दादाश्री : मैं क्या कहता हूँ कि विषय के प्रति अभिप्राय बदल जाए तो फिर विषय रहेगा ही नहीं। जब तक अभिप्राय नहीं बदलेगा, तब तक वीर्य का ऊर्ध्वगमन होगा ही नहीं। अपने यहाँ तो सीधा आत्मा में ही डाल देना है, वही ऊर्ध्वगमन है। विषय बंद करने से उसे आत्मा का सुख बर्तता है और विषय बंद हो जाए तो वीर्य का ऊर्ध्वगमन होता ही है। हमारी आज्ञा ही ऐसी है कि विषय बंद हो जाता है।

प्रश्नकर्ता : आज्ञा में क्या होता है? स्थूल बंद करना?

दादाश्री : स्थूल के लिए हम कुछ कहते ही नहीं। मन-बुद्धि-चित्त और अहंकार ब्रह्मचर्य में रहें, ऐसा होना चाहिए व यदि मन-बुद्धि-चित्त और अहंकार ब्रह्मचर्य के पक्ष में आ गए तो स्थूल(ब्रह्मचर्य) तो अपने आप आ ही जाएगा। तेरे मन-बुद्धि-चित्त और अहंकार को पलट। हमारी आज्ञा ऐसी है कि ये चारों पलट ही जाते हैं।

जिस संग में ऐसा लगे कि हम फँस जाएँगे तो उस संग से बहुत ही दूर रहना, वर्ना एक बार फँस गए तो बार-बार फँसते ही जाओगे, इसलिए वहाँ से भाग जाना। फिसलनवाली जगह हो और वहाँ से भाग जाओगे तो फिसलोगे नहीं। सत्संग में तो दूसरी 'फाइलें' नहीं मिलेंगी न? सभी एक जैसे विचारवाले मिलते हैं न?

तभी होगा आत्मा का एक्ज़ेक्ट अनुभव

प्रश्नकर्ता : दादाजी और भी स्पष्टीकरण दीजिए।

दादाश्री : चालीस रुपये किलो की चाय हो, लेकिन उसमें स्वाद नहीं आए, तो उसका क्या कारण होगा? क्योंकि एक ओर वह चाय पीता है और दूसरी ओर अनार खाता है, अगरूद खाता है, फिर क्या चाय का स्वाद मालूम पड़ेगा? तो चाय का टेस्ट कब मालूम पड़ेगा? कि जब बाकी का सब खाना बंद कर दे और मुँह-वुँह साफ करने के बाद चाय पीए तो समझ में आएगा कि चाय बहुत स्वादिष्ट है! तब चाय का अनुभव होगा। वैसे ही इन सभी चीज़ों के बीच आत्मा का अनुभव कैसे मालूम पड़ेगा? भान ही नहीं रहता न! मनुष्य की इतनी जागृति होती नहीं है न! इसलिए ऐसा प्रयोग करना चाहिए। छः-बारह महीनों का ब्रह्मचर्यव्रत लिया हो तो फिर यह अनुभव समझ में आएगा। चाय का अनुभव कर ने के लिए और सब खाना बंद करना पड़ेगा या नहीं करना पड़ेगा? उसी प्रकार आत्मा का अनुभव ऐसी वस्तु है कि जब अन्य सारे स्वाद बंद हो जाएँ तब यह स्वाद समझ में आएगा, तब तक समझ में नहीं आता न! जब तक विषय है, तब तक यह आत्मसुख और यह *पौद्‌गलिक* (जो पूरण और गलन होता है) सुख ऐसा भेद समझ ने नहीं देगा। इसलिए तो रोज़ भाग-दौड़ करके यहाँ क्यों आते हैं? क्योंकि उसे स्वाद तो रोज़ आता है लेकिन उसे पता नहीं चलता कि कहाँ से आता है? वहाँ संदेह रहता है। इसलिए जब सिर्फ ब्रह्मचर्य हो, छः-बारह महीनों के लिए ब्रह्मचर्यव्रत दिया हो तो उसे पता चलता है कि वास्तविक आनंद तो यह है। विषय नहीं है फिर भी इतना आनंद रहता है। बल्कि, यह आनंद तो और बढ़ता है। फिर उसकी समझ में आ जाता है कि आत्मा का आनंद कैसा होता है! वर्ना, तब तक तो समझ ही नहीं पाता कि यह कौन सा आनंद है? आनंद आता है वह नक्की है लेकिन यह पुद्‌गल का आनंद है या आत्मा का आनंद, यह एक्ज़ेक्ट समझ में आता नहीं न! अब इस काल में तो मन ठीक नहीं रहता, इसलिए मन का (मन से हो जाए उसके लिए) प्रत्याख्यान करना चाहिए और वाणी से भी नहीं बोलना चाहिए और काया से तो (ब्रह्मचर्य) रहना ही चाहिए। इस तरह मन-वचन-काया से छः बारह महीनों के लिए ब्रह्मचर्य रहे तो 'एक्ज़ेक्ट' अनुभव हो जाएगा। ज्ञान दिया हुआ है इसलिए अनुभव तो होता है, लेकिन ज्ञान का जैसा चाहिए वैसा सर्वांश अनुभव नहीं होता। जिसे अनुभव की तीव्र जिज्ञासा हो, वह इस प्रकार करे तो काम बने।

ज्ञानी छुड़वाएँ संसार जंजाल में से

प्रश्नकर्ता : (यह संसार) विषय में से उत्पन्न हुआ है न? यानी संसार जहाँ से शुरू हुआ है, वहीं से बंद करना पड़ेगा। तो बंद हो जाएगा।

दादाश्री : सूक्ष्म कारण तो अन्य हैं, स्थूल कारण यह है।

पुण्य से सभी इन्द्रियसुख मिलते हैं। उसमें फिर कपट खड़ा हो जाता है, भोगने की लालसा की वजह से कपट खड़ा हो जाता है और कपट से संसार खड़ा है।

यदि अब्रह्मचर्य की गाँठ विलय हो जाए तब तो सबकुछ चला जाएगा। यह सारा संसार उसी पर खड़ा हुआ है। रूट कॉज़ यही है। यदि यह बंद कर दे तो दीये जैसा हो जाएगा, फर्स्ट क्लास। ऐसा किसी ने हिन्दुस्तान में कहा नहीं है अभी तक। शील पर तो सबने परदा डाल दिया है। लोगों को इसी (विषय) में स्वाद आता है। टेस्ट इसीका है।

यह जंजाल है न, वह 'उसे' निरंतर 'आत्मा' में नहीं रहने देता। 'आपको' भी जंजाल तो है ही न, फिर? बच्चे कहेंगे, 'पिताजी फीस लाइए।' अरे भाई, फीस तो घर में है, लेकिन सौ का नोट भुनाने जाना पड़ेगा या नहीं जाना पड़ेगा? शादी नहीं की हो तो नौकरी, धंधा होता है। यानी यह सारा जंजाल हैं

और जब तक यह है तब तक निरंतर 'आत्मा' में नहीं रहा जा सकता। लेकिन 'अपने' भाव जब इस जंजाल (सुख है ऐसी मान्यता) में से कम होते जाएँगे और सुख 'आत्मा' में ही है, ऐसा समझ में आ जाएगा, तब यह जंजाल कम होता जाएगा, उसके बाद फिर 'आत्मा' में रहा जा सकेगा।

यानी कि इस संसार रोग का उपाय तो बहुत लोग कर-करके थक गए हैं। इसलिए भगवान ने कहा है न, 'पूरी दुनिया में कभी-कभी ही एकाध ऐसे ज्ञानी प्रकट होते हैं, वे रोज़ नहीं, सौ-सौ वर्षों में भी नहीं, कभी-कभी एकाध अवतरित होते हैं, तब अपना काम हो जाता है।'

प्रश्नकर्ता : विषय-विकार में से मुक्ति कैसे पाएँ?

दादाश्री : आप मुक्ति पाना चाहो तो मैं कर दूँगा। यह संसार जंजाल छोड़ने से छूट पाए, ऐसा नहीं है, यह ज्ञान से छूटे, ऐसा है। कितने समय से जंजाल से छूटने की इच्छा हो रही है? जवानी में तो छूटने की इच्छा होती नहीं। जवानी में तो जंजाल बढ़ाने की इच्छा होती है न?

प्रश्नकर्ता : वह तो बुढ़ापे में भी छूटने की इच्छा नहीं होती, लेकिन अब आपकी तरफ से कुछ प्रयत्न होंगे तो छूट पाएँगे।

दादाश्री : हाँ, ठीक है। बुढ़ापे में भी जंजाल में से छूटने की इच्छा नहीं होती, ऐसा है।

प्रश्नकर्ता : इसमें से छूटने का कोई रास्ता?

दादाश्री : इस जंजाल में से कभी छूटने की इच्छा होती है क्या? जंजाल पसंद ही नहीं है न? यह तो जंजाल में ही घुसे हुए हैं! जब तक नहीं छूट पाएँ, तब तक यह सब खाना-पीना, जैसा सब लोग करते हैं वैसा करते रहना है। लेकिन यदि छूटने को मिल जाए, 'ज्ञानीपुरुष' मिल जाएँ तो छूट जाएगा।

कितने ही जन्मों से पुरुषों ने इतनी-इतनी स्त्रियों से शादी की और स्त्रियों ने पुरुषों से शादी की, फिर भी अभी तक उन्हें विषय का मोह नहीं टूटता। तब फिर इसका अंत कब आएगा? इससे अच्छा तो हो जाओ अकेले, ताकि झंझट ही खत्म हो जाए न!

सही मान्यता में सच्चा सुख

इंसान को रोंग बिलीफ है कि विषय में सुख है। अब अगर विषय से भी ऊँचा सुख मिल जाए तो विषय में सुख नहीं लगेगा। विषय में सुख नहीं है लेकिन देहधारी को व्यवहार में चारा ही नहीं। बाकी जान-बूझकर गटर का ढक्कन कौन खोलेगा? विषय में सुख होता तो चक्रवर्ती इतनी सारी रानियाँ होने के बावजूद सुख की खोज में नहीं निकलते! इस ज्ञान से ऐसा ऊँचा सुख मिलता है। फिर भी इस ज्ञान के बाद तुरंत विषय चले नहीं जाते, लेकिन धीरे धीरे चले जाते हैं। फिर भी खुद को सोचना तो चाहिए कि यह विषय कितना गंदगीवाला है!

पुरुष को ऐसा दिखे कि 'स्त्री है,' तो यदि पुरुष में रोग होगा तभी उसे ऐसा दिखेगा कि 'स्त्री है'। पुरुष में रोग नहीं होगा तो स्त्री नहीं दिखेगी।

ज्ञानियों की दृष्टि आरपार होती है। जैसा है वैसा दिखता है। वैसा दिखे तो फिर विषय रहेगा? उसे कहते हैं, ज्ञान। ज्ञान मतलब आरपार, जैसा है वैसा दिखना। यह हाफ़ूस का आम हो तो उस विषय के लिए हम मना नहीं करते। उसे यदि काटे तो खून नहीं दिखेगा, तो उसे आराम से खा। इसे तो काटने से खून निकलता है, लेकिन उसकी जागृति नहीं रहती न! इसलिए मार खाता है। इसलिए यह संसार खड़ा रहा है। इस ज्ञान से जागृति धीरे धीरे बढ़ती जाती है, विषय खत्म होता जाता है। मुझे बंद करने के लिए कहना नहीं पड़ता, अपने आप ही आपका बंद होता जाता है।

दूषमकाल में हमेशा इंसान का मन कैसा होता है कि, 'कल से शक्कर नहीं मिलेगी' ऐसा कहा कि सभी भागदौड़ करके शक्कर ले आएँगे। यानी मन ऐसे हैं कि टेढ़े चलें। इसीलिए हमने सभी तरह की छूट दी है। दूषमकाल में मन पर बंधन लगाएँ कि 'ऐसा करो' तो मन उल्टा चले बिना नहीं रहेगा। इस दूषमकाल का स्वभाव है कि यदि रोका जाए तो बल्कि पूरे जोश के साथ उसी में पड़ेगा। इसलिए इस काल में हमारे निमित्त से अक्रम प्रकट हुआ है, जहाँ किसी भी तरह की रोकटोक नहीं है। इसलिए फिर मन जवान होता ही नहीं, मन बूढ़ा हो जाता है।' बूढ़ा हुआ कि निर्बल हो जाता है, फिर खत्म हो जाता है। जवान तो कब होता है कि जब उसे रोकें, तब। तृप्त इंसान विषय की गंदगी में हाथ ही नहीं डालेगा। यह तो भीतर तृप्ति नहीं है, इसलिए इस गंदगी में फँस गए हैं।

नुकसान के बही खाते बंद करके, हुए स्वतंत्र

विषय की वेदना से तो नर्क की वेदना अच्छी। नर्क में बीज नहीं डलते, नर्क में सिर्फ भुगतना ही होता है, डेबिट चुकता हो जाता है और यदि क्रेडिट होगा तो वहाँ देवगति में पूरा होगा। जबकि विषय में तो नये बीज पड़े बगैर रहते ही नहीं। ऐसे विचार तो हमें बचपन से ही आते थे, बहुत सोच चुके हैं हम।

ऐसे हिसाब निकालना है। पूरी जिंदगी हिसाब ही निकालते रहे। मेरी समझ में आ गया कि ये सारे नुकसान के बही खाते हैं, हमने उल्टा (गलत) व्यापार पकड़ रखा है! उसके बाद इन्डिपेन्डेन्ट (स्वतन्त्र) हो सके।

विषय यदि मजबूरन भोगना पड़े तो वह विष नहीं है। तू पैसे खुलकर खर्च करता है या मजबूरन? यह तो सिर्फ पैसों की ही बात है, लेकिन एक ही बार के विषय में तो कितने ही अरबों का नुकसान है, भयंकर हिंसा है। पैसों की इतनी क़ीमत नहीं है, पैसा तो फिर से आ जाएगा। ये सारे हिसाब भुगतने पड़ेंगे। जितने हिसाब बाँधने हों, उतने बाँधना। जितनी ताकत हो, उतने हिसाब बाँधना। बाकी, यदि भुगतते समय सहन नहीं हो और चीखे-चिल्लाए, उसके बजाय पहले से ही सावधान रहकर हिसाब बाँधना।

कुदरत तैयारी कर ही रही है। जो सुधारने से नहीं सुधरते, वे कैसे सुधरेंगे? वे हारकर सुधरेंगे। वह जर्जर बना देगा। कुदरत थोड़े समय में उन्हें ऐसा जर्जर बना देगी कि यहाँ मेरे समझाने से यदि सुधर गए तो ठीक है, वर्ना जर्जर बनानेवाले तो तैयार हैं ही पीछे।

बाकी हम तो सावधान करते हैं कि जैसे-तैसे बच जाए तो अच्छा। फिर और क्या करें? हम उसे थोड़े ही मारेंगे? बाकी ज्ञानी मिलें फिर भी नहीं बच पाए, तो फिर उसी की भूल है न!

'ज्ञानी' संज्ञा एकमात्र ध्रुव काँटा

ज्ञानी की संज्ञा से देखे तो इसमें निरा दुःख है। 'ज्ञानीपुरुष' से यदि कभी ब्रह्मचर्य से संबंधित बातें सुने तो वैराग्य ही ले ले। यदि विषय का पूरी तरह से वर्णन किया जाए तो मनुष्य सुनते ही पागल हो जाए। इतना जोखिमवाला है वह। जिसे आंतरिक सुख है, वह अब्रह्मचर्य करेगा ही नहीं। ये तो आंतरिक दुःख के कारण अब्रह्मचर्य करते हैं।

इस जगत् में इस तरह धीरे-धीरे स्टेपिंग लेना (कदम उठाना) कि किसी से भी डर न लगे। मोक्ष में जाना हो तो लोकभय और लोकसंज्ञा के विरूद्ध जाना पड़ेगा।

वीतरागों का विज्ञान ही तृप्ति दिलवा सकता है। 'ज्ञानी' की संज्ञा का ध्रुव काँटा होगा, तो ठेठ तक पहुँचा देगा और लोकसंज्ञा का ध्रुव काँटा होगा, तो संसार में भटकाता रहेगा।

- जय सच्चिदानंद

क़ीमत खूबसूरत चमड़ी की ?

पहले के साधु-आचार्य महाराज रूपवान होते थे, फिर भी वे सिर के बाल बढ़ाकर, रूप को बढ़ावा नहीं देते थे, रूप कैसे दब जाए, वही ढूँढते रहते थे। दाढ़ी बढ़ाते, लोच करते, ऐसा सब करते थे! लेकिन वे लोग बहुत जागृतिपूर्वक रहते थे। क्योंकि 'मेरे रूप से किसी को दुःख होगा' वे ऐसा कहते थे।

आजकल तो लोगों में ऐसा रूप, ऐसा लावण्यभाव नहीं होता, इसलिए वह बाल न रखे या दाढ़ी बढ़ाए तो वह बीमार आदमी जैसा दिखाई देगा। दाढ़ी बढ़ गई हो, फिर शरीर भले ही तगड़ा हो लेकिन लोग उसे पूछेंगे कि, 'क्यों तबियत खराब हो गई है क्या? क्या हुआ है?' आज के लोगों में रूप होता ही नहीं, जो थोड़ा-बहुत रूप होता है, वह भी अहंकार के कारण कुरूप लगता है! उस रूप, उस लावण्य की तो बात ही अलग होती है! अंग-उपांग सभी संतुलित होते हैं। अंग-उपांग नाटे-मोटे हों, उसे रूप कहेंगे ही कैसे? वह तो सभी संतुलित, 'रेग्युलर स्टेज' में होना चाहिए। वैसा लावण्य इस काल में है ही नहीं न! रूप और लावण्य का आधार तो, उसके क्या-क्या विचार हैं, उस पर है।

मोह किसे ज़्यादा होता है? खूबसूरत चमड़ीवाले को या काली चमड़ीवाले को? तो कहे, खूबसूरत चमड़ीवाले को। जिसकी सुंदर चमड़ी हो, तो समझ लेना कि लोगों के हाथों वह ज़्यादा भोगे जाएँगे। जो खूबसूरत चमड़ीवाले होते हैं, उनके *पुद्गल* (जो पूरण और गलन होता है) में क्या मोह ज़्यादा भरा हुआ होता है, तभी चमड़ी सुंदर होती है न! ऐसा है, खूबसूरत चमड़ी यानी गोरी चमड़ी नहीं। हमारे हिन्दुस्तान में गेहुँआ चमड़ी को 'बेस्ट' माना गया है। मेरा और आपका रंग गेहुँआ कहलाता है। उसे 'बेस्ट' रंग कहा है और वही अंतिम प्रकार का रंग है। खूबसूरत चमड़ीवाले तो गोरेगब जैसे होते हैं, वे ज़्यादा मोही होते हैं, इसलिए वे ज़्यादा भोग लिए जाते हैं। ऐसे सब ये कुदरत के नियम हैं। हमें तो अब यह 'ज्ञान' हाज़िर रहना चाहिए।

मोह ज़्यादा होता है, इसलिए फिर माल ऐसा आकर्षक होता है। उसे मूर्छित कहा जाता है। मोह कम होने के बाद फिर सभी अंग सुडौल होते हैं, लेकिन चमड़ी आकर्षक नहीं होती। सुडौल होते हैं इसलिए वे सुंदर कहे जाते हैं। चमड़ी आकर्षक हो तो उसे रूप नहीं कहते। वह तो एक तरह का बाज़ारू माल कहलाता है। जिसकी खरीदारी-बिक्री होती ही रहती है। इन सभी को आम लाने भेजें, तो वे कैसे लाएँगे? ऊपर से सुंदर दिखें, वैसे लाएँगे। फिर अंदर से वे खट्टे निकलेंगे या कैसे, वह तो फिर भगवान ही जानें!

जो प्रभावशाली होते हैं, उन्हें देखते ही प्रभाव पड़ता हैं यानि कि अपने भाव बदल जाते हैं, जबकि आकर्षक चमड़ीवाले को देखकर ऐसे भाव हो जाते हैं कि जो अधोगति में ले जाएँ। बोलो, तब फिर देखने मात्र से ही जो माल अधोगति में ले जाए, वह माल कैसा होगा? इसीलिए लोग कहते हैं न कि, 'भाई, प्रभावशाली से मिलना ताकि अपने भाव उच्च हो, और हम पर उनका प्रभाव पड़े। और आकर्षक चमड़ीवाले को तो देखते ही, जो ज्ञान होगा वह भी चला जाएगा।

तीर्थंकर भगवान महावीर की त्वचा आकर्षक नहीं थी। भगवान सुडौल होते हैं। उनमें मोह की प्रकृति होती ही नहीं न! मोह प्रकृति, वही आकर्षक चमड़ी है। मोही प्रकृतिवालों की आँखें भी विकारी होती हैं। और फिर आज के जीव क्या मानते हैं कि, 'मैं कितना सुंदर हूँ!' अरे! तेरी क़ीमत ही नहीं है दुनिया में! प्रभाव नहीं पड़ता। बल्कि, देखते ही ऐसा भाव होता है कि जो अधोगति में ले जाए और जो ज्ञान हो, वह भी चला जाए। पुरुष लड़कियों को देखें, तो देखते ही ज्ञान चला जाता है और लड़कियाँ पुरुषों को देखें, तो देखते ही ज्ञान चला जाता है। इसलिए ऐसे माल को देखना ही नहीं है। जिससे प्रभाव उत्पन्न हो, अपने भाव बदलें, विचार बदलें, ऐसे माल को देखना। यह तो सारा कचरा माल, 'रबिश', बिकाऊ माल!

(परम पूज्य दादाश्री की ज्ञानवाणी में से संकलित)

दादाई जगकल्याण मिशन - सत्संग हाइलाईट्स

१२-१३ नवम्बर : पूज्य श्री के सौराष्ट्र के सत्संग प्रवास की शुरूआत जामनगर सेन्टर से हुई। मुमुक्षु-महात्माओं ने ज्ञान से संबंधित तथा व्यावहारिक परेशानियों के समाधान के लिए प्रश्न पूछें। १५०० मुमुक्षुओं ने आत्मज्ञान प्राप्त किया। आप्तपुत्र द्वारा फोलोअप सत्संग में भी ज्ञान लिए हुए नए महात्मा बड़ी संख्या में आएँ।

१५-१७ नवम्बर : राजकोट में तीन दिवसीय सत्संग-ज्ञानविधि कार्यक्रम दौरान २५०० मुमक्षुओं ने आत्मज्ञान प्राप्त किया। लगभग ८००० महात्माओं ने इस कार्यक्रम का लाभ लिया। सेवार्थी सत्संग में लगभग ३६० सेवार्थियों को पूज्य श्री के सत्संग-दर्शन का अनुपम अवसर मिला।

१९-२० नवम्बर : वेरावल में आयोजित सत्संग-ज्ञानविधि कार्यक्रम दौरान १००० मुमुक्षुओं ने आत्मज्ञान प्राप्त किया। सेवार्थी सत्संग दौरान महात्माओं ने ज्ञान के ह्रदयस्पर्शी अनुभव व्यक्त किए और पूज्यश्री के दर्शन करके धन्यता अनुभव की। ज्ञान लेने आए हुए काफी मुमुक्षु बरसों से पूज्य नीरू माँ और पूज्य श्री को टी.वी. पर सुनते थें।

२१ नवम्बर : जूनागढ़ में महात्माओं के लिए विशेष तौर पर आयोजित सत्संग में लगभग २००० महात्मा उपस्थित रहें। यह नोट करने जैसा है कि सत्संग में नियमित हाज़िर नहीं रह सकने के बावजूद भी काफी लोग दादाजी के ज्ञान के साथ जुडे हुए हैं। महात्माओं ने ज्ञान संबंधी गुह्य प्रश्न पूछें और अंत में सभी ने पूज्यश्री के साथ महाप्रसाद ग्रहण किया।

२३-२४ नवम्बर : ग्यारह वर्षों के पश्चात ध्रांगध्रा में आयोजित सत्संग-ज्ञानविधि कार्यक्रम दौरान १८०० मुमक्षुओं ने आत्मज्ञान प्राप्त किया। ध्रांगध्रा एक छोटा शहर होने के बावजूद भी इतनी बड़ी संख्या में मुमुक्षुओं का ज्ञान लेने का उत्साह सराहनीय रहा। सेवार्थियों के लिए पूज्यश्री का दर्शन-सत्संग तथा ज्ञान लिए नए महात्माओं के लिए आप्तपुत्र द्वारा फोलोअप सत्संग भी आयोजित किया गया।

२५ नवम्बर : सुरेन्द्रनगर त्रिमंदिर में स्थानिक महात्माओं के लिए पूज्यश्री का एक दिवसीय विशेष सत्संग आयोजित हुआ, लगभग ७०० महात्माओं ने इस कार्यक्रम का लाभ लिया और ज्ञान, आज्ञा, प्रतिक्रमण संबंधी प्रश्न पूछकर समाधान प्राप्त किया। पूज्यश्री ने सुरेन्द्रनगर त्रिमंदिर में दर्शन किए और सेवार्थियों के साथ विशेष सत्संग भी किया।

२ दिसम्बर : अड़ालज त्रिमंदिर में पूज्य नीरू माँ के ७१वे जन्मदिन पर प्रात: सीमंधर सिटी में शोभायात्रा के बाद पूज्य नीरू माँ की समाधि पर समूह में महात्माओं ने प्रार्थना-आरती की। पूज्यश्री ने विशेष संदेश में पूज्य नीरू माँ के आदर्श अपने जीवन में अपनाने पर ज़ोर दिया। शाम को जगत् कल्याण के लिए एक घंटा कीर्तन भक्ति हुई तथा 'पाँच आज्ञा का महत्व' पर पूज्य नीरू माँ की स्पेशियल सी.डी. दिखाई गई। रात में महात्मावर्य कविराज ने अपने सुमधुर कंठ से भक्तिपद गाकर महात्माओं को भावविभोर कर दिया। कविराज के धर्मपत्नी म. दमयंतीबहन ने भी पूज्य नीरू माँ के साथ हुए अपने अनुभव व्यक्त किए। अंत में 'दादा भगवान ना असीम जय जयकार हो' की भक्ति धून में सभी महात्मा झूम उठें।

५-७ दिसम्बर : बेंगलूरु में आयोजित सत्संग-ज्ञानविध र्क्याक्रम दौरान ८५० मुमुक्षुओं ने आत्मज्ञान प्राप्त किया, जिसमें लगभग १०० कन्न्ड भाषी भी थें। सत्संग दौरान कर्म के सिद्धांत पर पूछे गए प्रश्नों के पूज्यश्री ने अंग्रेजी में सुंदर जवाब दिए। सेवार्थी सत्संग में १५० महात्माओं ने पूज्य श्री के सत्संग-दर्शन का लाभ लिया।

९-११ दिसम्बर : भोपाल में आयोजित सत्संग-ज्ञानविधि दौरान ८५० मुमुक्षुओं ने आत्मज्ञान प्राप्त किया। दूरदर्शन पर प्रसारित होनेवाले सत्संग की वजह से सुंदर प्रतिसाद मिला। मध्यप्रदेश के विविध विस्तारों से लगभग ३०० मुमुक्षु आएँ। भोपाल के महात्माओं को बोनस के तौर पर पूज्यश्री के साथ पिकनिक का अमूल्य अवसर प्राप्त हुआ। स्थानीय महात्मा पूज्यश्री के साथ प्रसिद्ध 'मानव-संग्रहालय' देखने गएँ। जिसमें भारत की विविध आदिवासी जातियों की संस्कृति का सुंदर प्रदर्शन लगभग २०० एकर विस्तार में किया गया है। पूज्यश्री ने केराला, हिमाचल प्रदेश, लड़ाख वगैरह विस्तारों के प्रतिकृति मकानों पर जाकर उनका इतिहास सुना। पूज्यश्री ने इन्फोर्मल सेशन दौरान परम पूज्य दादाश्री के साथ की गई यात्राओं के अनुभव महात्माओं को बताएँ। अंत में पूज्यश्री के साथ महात्माओं ने भोजन प्रसाद लिया।

१२-१४ दिसम्बर : दिल्ली में आयोजित सत्संग कार्यक्रम दौरान ५०० मुमुक्षुओं ने आत्मज्ञान प्राप्त किया। कड़ाके की ठंड और बारिश के बावजूद भी बहुत सारे मुमुक्षु आएँ। नेपाल, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड और विविध राज्यों से लोग आएँ। दो दिवसीय सत्संग दौरान काफी अच्छी प्रश्नोत्तरी हुई। जिसमें उपस्थित सभी मुमुक्षुओं ने रूचिपूर्वक सुना। कुछ महात्माओं ने अपने ह्रदयस्पर्शी अनुभव कहें। नेशनल दूरदर्शन पर प्रसारित होनेवाले सत्संग कार्यक्रम की वजह से बहुत ही अच्छा प्रतिसाद देखने को मिला।

आत्मज्ञानी पूज्य नीरू माँ और पूज्य दीपकभाई के आशीर्वाद प्राप्त आप्तपुत्रों के सत्संग कार्यक्रम

इन्दौर **दिनांक : 13-14 फरवरी, समय :** शाम 6 से 8-30 **संपर्क :** 9039936173
स्थल : कच्छी जैन धर्मशाला, स्नेहलता गंज, भंडारी ब्रिज के पास, जेल रोड.

भोपाल **दिनांक : 15 फरवरी** **समय :** शाम 5 से 7 **संपर्क :** 9425024405
स्थल : जनकविहार कोम्प्लेक्स, एयरटेल ओफिस के सामने, मालवियानगर.

जबलपुर **दिनांक : 16 फरवरी**
समय और स्थल की जानकारी के लिए **संपर्क :** 9425160428

नागपुर **दिनांक : 17 फरवरी** **समय :** शाम 6-30 से 8-30 **संपर्क :** 9970059233
स्थल : कच्छी विशा ओशवाल समाज, 57/58, अनाथ विद्यार्थी गृह लेआउट, लकडगंज

अमरावती **दिनांक : 18 फरवरी** **समय :** शाम 5-30 से 7-30 **संपर्क :** 9403411471
स्थल : दादा भगवान सत्संग केन्द्र, भारत ओटो के पास, मोटे कम्पाउन्ड, मोर्शी रोड.

अमरावती **दिनांक : 19 फरवरी** **समय :** शाम 5-30 से 7-30 **संपर्क :** 9403411471
स्थल : दोशी वाडी, गुलशन मार्केट, बिग-राजेश सिनेमा के पास, जयस्तंभ चौक.

जलगाँव **दिनांक : 20 फरवरी** **समय :** शाम 5 से 7-30 **संपर्क :** 9420942944
स्थल : होटल सिल्वर पेलेस, नेहरु चौक के पास, रेल्वे स्टेशन रोड.

औरंगाबाद **दिनांक : 21 फरवरी** **समय :** शाम 5 से 8 **संपर्क :** 8308008897
स्थल : शास्त्रीनगर होल, हेडगेवार होस्पिटल, गजानन मंदिर, जवाहर कोलोनी.

पुणे **दिनांक : 22 फरवरी** **समय की जानकारी के लिए संपर्क :** 9422660497
स्थल : होटल गोल्डन एमरल्ड, महर्षिनगर कोर्नर के पास, गोर्वधन चौक के पास, मार्केट यार्ड.

सोलापुर **दिनांक : 23 फरवरी** **समय :** शाम 4 से 6
स्थल की जानकारी के लिए **संपर्क :** 9423336949, 9765081869

'दादावाणी' के वार्षिक सदस्यों के लिए सूचना

आपको आपकी दादावाणी पत्रिका की सदस्यता समाप्त हो रही है उसका पता कैसे चलेगा? यदि आपको मिली इस महीने की दादावाणी पत्रिका के कवर पर लगे हुए लेबल पर ग्राहक नं. के बाद # हो तो यह आपकी अन्तिम दादावाणी पत्रिका है। उदा. DHIA12345 #. दादावाणी पत्रिका रिन्यु कराने के लिए पेज नं. ३ पर दर्शाये गए मूल्य अनुसार मनी आर्डर या डिमान्ड ड्राफ्ट (पेयेबल अहमदाबाद) त्रिमंदिर अडालज के पते पर भेजें। साथ ही अपना नाम, पूरा पता (पिनकोड के साथ), फोन-मोबाइल नंबर, इ-मेल आदि आवश्यक जानकारी दें।

'दादावाणी' के सभी सदस्यों के लिए सूचना

हिन्दी और अंग्रेजी भाषाओं में दादावाणी पत्रिका हर महिने 15वी तारीख को पोस्ट की जाती है। जिन महात्माओं को 'दादावाणी' पत्रिका विलंब से या तो अनियमित रूप से मिलती है, वे पूर्व प्राप्त पत्रिका के कवर पर अपना नाम, पता, पीनकोड आदि जाँच कर लें। यदि उसमें कोई भूल हो तो आपका ग्राहक नं, पूरा नाम-पता, पीनकोड के साथ लिखकर मोबाईल नं. **8155007500** पर SMS करें। आप अडालज त्रिमंदिर के पते पर पत्र से या dadavani@dadabhagwan.org इ-मेइल आइडी पर इ-मेइल से भी सूचित कर सकते हैं। जिससे आपकी यहाँ दर्ज की गई जानकारी में सुधार किया जा सके। यदि आपको दादावाणी का अंक न मिले तो उपर दिए गए कोई भी माध्यम से हमें सूचित करें। यदि अंक स्टोक में होगा तो आपको फिर से भेजा जाएगा।

मुख्य सेन्टरों के संपर्क : अडालज त्रिमंदिर: (079) 39830100, **अहमदाबाद:** (079) 27540408, **वडोदरा : (दादा मंदिर)** 9924343335, **राजकोट त्रिमंदिर:** 9274111393, **भूज त्रिमंदिर:** (02832) 290123, **गोधरा त्रिमंदिर:** (02672) 262300, **मुंबई:** 9323528901, **दिल्ली:** 9310022350, **बैंगलूर:** 9590979099, **कोलकता:** 033-32933885, **यु.के.:** +44 330-111-DADA (3232), **यु.एस.ए.-केनेडा:** +1 877-505-DADA (3232), **ऑस्ट्रेलिया:** +61 421127947, **केन्या:** +254 722722063

Pujya Deepakbhai's UK-Germany Satsang Schedule (2015)				
Contact no. for all centers in UK + 44-330-111-DADA (3232), email:info@uk.dadabhagwan.org				
Date	**From**	**to**	**Event**	**Venue**
27-31 March	TBA	TBA	Satsang & Gnanvidhi	Germany - Willingen
2-6 Apr-15	All Day	All Day	UK Shibir	Pakefield
8-Apr-15	7-30PM	10PM	Satsang	Nagrecha Hall, 202 Leyton Road, London, E15 1DT
9-Apr-15	10-30AM	12-30PM	Aptaputra Satsang	
9-Apr-15	6PM	10PM	Gnanvidhi	
10-Apr-15	7-30PM	10PM	Satsang For Mahatmas Only	Wanza Community Centre, Pasture Lane, Leicester, LE1 4EY
11-Apr-15	7-30PM	10PM	Satsang	
12-Apr-15	10-30AM	12-30PM	Aptaputra Satsang	
12-Apr-15	3PM	7-30PM	Gnanvidhi	
13-Apr-15	7-30PM	10PM	Aptaputra Satsang	
17-Apr-15	7-30PM	10PM	Satsang in English	Harrow Leisure Centre, Christchurch Avenue, Harrow, HA3 5BD
18-Apr-15	10-30AM	12-30PM	Aptaputra Satsang in English	
18-Apr-15	7-30PM	10PM	Satsang	
19-Apr-15	9-30AM	12-30PM	Simandhar Swami Pratishtha	
19-Apr-15	3PM	7-30PM	Gnanvidhi	
20-Apr-15	7-30PM	10PM	Satsang	

पूज्य नीरूमाँ को देखिए टी.वी. चैनल पर...

भारत
- **'आस्था'** पर हर रोज़ रात १०-२० से १०-४० (हिन्दी में)
- **'दूरदर्शन' - बिहार** पर हर रोज़ सुबह ७ से ७-३० तथा रविवार शाम ५-३० से ६ (हिन्दी में)
- **'दूरदर्शन' - भोपाल** पर सोम से शुक्र दोपहर ३-३० से ४ (हिन्दी में)
- **'दूरदर्शन' - गुजरात-गिरनार** पर हर रोज़ सुबह ९ से ९-३० (गुजराती में)
- **'अरिहंत'** पर हर रोज़ सुबह १० से १०-३०, दोपहर ३-३० से ४ (गुजराती में)

USA — 'TV Asia' पर हर रोज, सुबह ७-३० से ८ EST (गुजराती में)

Dubai — **'सब टीवी'** पर हर रोज़ सुबह ३ से ३-३० (हिन्दी में)

Australia — **'सब टीवी'** पर हर रोज़ सुबह १० से १०-३० (हिन्दी में)

New Zealand — **'सब टीवी'** पर हर रोज़ दोपहर १२ से १२-३० (हिन्दी में)

USA-Canada-UK-Singapore — **'सब टीवी'** पर हर रोज़ सुबह ८ से ८-३० (हिन्दी में)

पूज्य दीपकभाई को देखिए टी.वी. चैनल पर...

भारत
- **'दूरदर्शन-नेशनल' पर हर मंगलवार से शुक्रवार सुबह ९-३० से १० (हिन्दी में)**
- **'साधना'** पर हर रोज़ शाम ७-१० से ७-४० (हिन्दी में)
- **'दूरदर्शन' गुजरात -गिरनार** पर सोम से शनि दोपहर ३-३० से ४ (गुजराती में)
- **'दूरदर्शन' गुजरात -गिरनार** पर हर रोज़ रात ९ से ९-३० (गुजराती में)
- **'अरिहंत' चेनल** पर हर रोज़ रात ८-३० से ९ (गुजराती में)
- **'दूरदर्शन-सह्याद्रि'** पर हर रोज़ सुबह ७ से ७-३० (मराठी में)

USA — 'TV Asia' पर हर रोज, सुबह ११ से ११-३० EST

UK — **'वीनस' टीवी** पर हर रोज़ सुबह ८-३० से ९ (गुजराती में)

Singapore — **'कलर्स' टीवी** पर हर रोज़ सुबह ७ से ७-३० (हिन्दी में)

Australia — **'कलर्स' टीवी** पर हर रोज़ सुबह ७-३० से ८ (हिन्दी में)

New Zealand — **'कलर्स' टीवी** पर हर रोज़ सुबह ९-३० से १० (हिन्दी में)

USA-UK-Africa-Aus. — **'आस्था'** (डीश टीवी चेनल 849-युके, 719-युएसए) पर हर रोज़ रात ९-३० से १० (गुजराती में)

आत्मज्ञानी पूज्य दीपकभाई के सांनिध्य में आगामी सत्संग कार्यक्रम

मुंबई

दि. **३०-३१ जनवरी** (शुक्र-शनि), शाम ६-३० से ९ - **सत्संग** तथा **१ फरवरी** (रवि), शाम ५-३० से ९ - **ज्ञानविधि**
स्थल : आजाद मैदान, महानगर पालिका रोड, BMC हेड ओफिस सामने, CST स्टेशन सामने. **संपर्क :** 9323528901
दि. **२ फरवरी** (सोम), शाम ६-३० से ९ - **आप्तपुत्र सत्संग**
स्थल : बिरला मातुश्री सभागृह होल, बिल्डींग नं-19, बोम्बे होस्पिटल के पास, मरीन लाइन्स. **संपर्क :** 9323528901

भावनगर

दि. **३ फरवरी** (मंगल), रात ७-३० से १० - **सत्संग** तथा **४ फरवरी** (बुध), शाम ६-३० से १० - **ज्ञानविधि**
दि. **५ फरवरी** (गुरु), रात ७-३० से १० - **आप्तपुत्र सत्संग**
स्थल : गुलिस्ता मैदान, वाघावाडी रोड, भावनगर (गुजरात). **संपर्क :** 9924344425

अमरेली

दि. **६ फरवरी** (शुक्र), रात ८ से १०-३० - **सत्संग** तथा **७ फरवरी** (शनि), शाम ७ से १०-३० - **ज्ञानविधि**
स्थल : अमरेली त्रिमंदिर, लीलीया रोड बायपास चोकडी, श्यामवाडी के पास (गुजरात). **संपर्क :** 9924080645

वडोदरा

दि. **२०-२१ फरवरी** (शुक्र-शनि), रात ७ से ९-३० - **सत्संग** तथा **२२ फरवरी** (रवि), शाम ५-३० से ९ - **ज्ञानविधि**
दि. **२३ फरवरी** (सोम), रात ७ से ९-३० - **आप्तपुत्र सत्संग**
स्थल : बा-बापुजी उद्यान, समता ग्राउन्ड, सुभानपुरा, वडोदरा (गुजरात). **संपर्क :** 9924343335

वलसाड

दि. **२४ फरवरी** (मंगल), शाम ६ से ८-३० - **सत्संग** तथा **२५ फरवरी** (बुध), शाम ५ से ८-३० - **ज्ञानविधि**
दि. **२६ फरवरी** (गुरु), शाम ६ से ८-३० - **आप्तपुत्र सत्संग**
स्थल : तडकेश्वर मंदिर ग्राउन्ड, फ्लाय ओवर ब्रिज के पास, अब्रामा, वलसाड (गुजरात). **संपर्क :** 9924343245

सुरत

दि. **२७-२८ फरवरी** (शुक्र-शनि), रात ८ से १०-३० - **सत्संग** तथा **१ मार्च** (रवि), शाम ५-३० से ९ - **ज्ञानविधि**
दि. **२ मार्च** (सोम), रात ८ से १०-३० - **आप्तपुत्र सत्संग**
स्थल : SMC पार्टी प्लोट, उमरा पुलिस स्टेशन के पास, अठवा लाइन्स, सुरत (गुजरात). **संपर्क :** 9574008007

अमरेली त्रिमंदिर प्राणप्रतिष्ठा महोत्सव

दि. ८ फरवरी २०१५ (रविवार)

प्राणप्रतिष्ठा विधि : सुबह १० से १-३०
प्रक्षाल-पूजन-आरती : शाम ४ से ७
भक्ति : रात ८-३० से १०
स्थल : अमरेली त्रिमंदिर, लीलीया रोड बायपास चोकडी, श्यामवाडी के पास. **संपर्क :** 9924080645

विशेष सूचना :

१) प्राणप्रतिष्ठा कार्यक्रम केवल एक दिन का होने की वजह से आवास सुविधा उपलब्ध नहीं है। जो महात्मा-मुमुक्षु उसी दिन सीधे ही महोत्सव स्थल पर पहुँचेंगे, उनके लिए बाथरूम-टोइलेट की सुविधा स्थल पर रहेगी।
२) कार्यक्रम में भाग लेने के लिए अपने नजदिकी सत्संग केन्द्र पर रजिस्ट्रेशन अवश्य करवाएँ।

जनवरी २०१५
वर्ष - १० अंक - ३
अखंड क्रमांक - १११

दादावाणी

Date Of Publication On 15th Of Every Month
RNI No. GUJHIN/2005/17258
Reg. No. GAMC - 1500/2015-2017
Valid up to 31-12-2017
LPWP Licence No. CPMG/GJ/15/2015
Valid up to 31-12-2017
Posted at AHD. P.S.O. Sorting Office Set - 1
on 15th of each month.

लोकसंज्ञा से विषय में मनुष्य बने हैं जानवर से भी बदतर

जो इस विषय में सुख मान बैठे हैं, वह निरी पाशवता है। पशु कभी भी इसमें सुख नहीं मानते। वर्ना उन्हें कोई मना करता है? लेकिन उन्हें है कोई झंझट? साथ में ही घूमते-फिरते हैं, लेकिन झंझट नहीं है न? वे बेचारे कुदरत की प्रेरणा से जब उनका समय आता है, उतने समय के लिए ही उत्तेजना अनुभव करते हैं। ये तो मनुष्य में आए और जंगली रहे। हिन्दुस्तान में तो कहीं ऐसे पाशवी कर्म होते होंगे? कैसा ऋषि-मुनियों का देश! देखो, उनकी दशा तो देखो! रात-दिन विषय के ही विचार आते रहते हैं! ये मनुष्य तो जानवर से भी गए गुजरे हैं। उनका तो रोज़ यही तूफान होता है, नीयत ही यही। विषय के संबंध में किसी ने सोचा ही नहीं, लोकसंज्ञा से। उसमें क्या-क्या दोष हैं, यह देखा ही नहीं किसी जगह पर! जितना दोष दुनिया में किसी और चीज़ में नहीं होगा, उतना दोष अब्रह्मचर्य में है। लेकिन जानते ही नहीं हों तो क्या हो सकता है? यही लोकसंज्ञा चली आई है, पाशवता की ही। जैसा पशु में भी नहीं होता, मनुष्यों की वैसी लीला देखकर अचरज ही होगा न!

-दादाश्री

Printed and Published by Dimple Mehta on behalf of Mahavideh Foundation-Owner. Printed at Amba Offset, Basement, Parshvanath Chambers, Usmanpura, Ahmedabad-380014.